खण्ड 2

आधुनिक सरकारों का सन्दर्भ

सरकार की अवधारणा हमारे राजनीतिक जीवन में सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक संस्थानों में से एक है। आमतौर पर सरकारों को एक औपचारिक प्रशासनिक तंत्र अथवा एक संस्थागत प्रक्रिया के रूप में माना जाता है, जिसके माध्यम् से राज्य अपनी संप्रभुता का उपयोग करते हैं और समाज पर नियंत्रण रखते है। वे कई प्रकार के कार्य करते है, जैसे– राज्य का प्रबंधन, सार्वजनिक प्रकरणों को विनियमित करना, सार्वजनिक नीतियां बनाना एवं कार्यान्वित करना, कानूनों को लागू करना, राज्य और उसके नागरिकों की रक्षा करना एवं अन्य वे कार्य जो कि एक स्थायी राजनीतिक प्रणाली के रूप में समाज के लिए आवश्यक मानें जाते है। हालांकि, इन सरकारों के कार्य करने के तरीकों में विवधता है और इसका तात्पर्य है कि इन सरकारों के कार्य परिस्थितियों एवं संदर्भो से निर्धारित होते हैं, जिसमें वे काम करती है। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, फ्रांस, जापान या जर्मनी जैसे देशों की सरकारें चीन, उत्तर–कोरिया, वियतनाम या भारत, ब्राजील या दक्षिण अफ्रीका जैसे अन्य देशों की सरकारों से भिन्न पाई जाती है। वे न केवल अपने राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक दृष्टिकोण में भिन्न होती हैं, बल्कि उनकी कार्यप्रणालियां भी उस सीमा तक भिन्न होती है जिसमें समाज के अंतर्गत सार्वजनिक मामलों को आकार एवं निर्देशित किया जाता है। इसी तरह, राज्य के शासन को चलाने वाले ढांचे या संगठन भी काफी हद तक भिन्न होते है।

इस खण्ड की तीन इकाईयां उस व्यापक संदर्भ पर केंद्रित हैं जिसमें आधुनिक सरकारें कार्य करती है। इनका तुलनात्मक अध्ययन करने के उद्देश्य से हम सुपरिचित तीन श्रेणियों में विभक्त विश्व पर निर्भर है, जो इस प्रकार है–

(1) पूंजीवादी राष्ट्र– प्रथम विश्व, (2) समाजवादी राष्ट्र– द्वितीय विश्व, (3) नव स्वतंत्र राष्ट्र– तीसरी दुनिया।

हालांकि, समाजवादी खेमे के पतन के पश्चात् इस तरह के समूह राजनीतिक रूप से टिकाऊ नहीं है, लेकिन शासन की मौजूदा प्रणालियां जो मोटे तौर पर पहले से विभक्त राजनीतिक खंड के अनुरूप है, उस आधार पर देशों की अर्थव्यवस्थाओं की श्रेणियां इस प्रकार है– उन्नत अर्थव्यवस्थाएं, केंद्रित योजनाओं वाली अर्थव्यवस्थाएं या कम्यूनिस्ट देशों के पश्चात की अर्थव्यवस्थाएं और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं।

इकाई–6 में हम पूंजीवाद के विचार और औद्योगिक पूंजीवादी राज्यों में शासन की प्रकृति एवं संरचना के बारे में जानेंगे। इकाई–7 में हम समाजवादी विचारधारा और सरकार के समाजवादी मॉडल की कार्यप्रणाली का परिचय देते है, जो देश के आर्थिक मामलों के संचालन में इसकी भूमिका पर केंद्रित है। खंड की अंतिम इकाई विकासशील औपनिवेशिक देशों में शासन की प्रकृति और संरचना से संबंधित है, जो आमतौर पर दुर्बल सामाजिक–राजनीतिक स्थितियों की विशेषता होती है।

इकाई 6 पूंजीवाद और उदार लोकतंत्र का विचार

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 परिचय

6.2 पूंजीवाद के ऐतिहासिक तटबंध और उदार लोकतंत्र

6.3 पूंजीवाद और उदार लोकतंत्र क्या है?

6.4 उदारवादी लोकतंत्र और पूंजीवाद के बीच अंतर्संबंध

6.5 प्रतियोगिता, तर्क–वितर्क और पूंजीवाद और उदारवादी लोकतंत्र का भविष्य

6.6 सारांश

6.7 संदर्भ

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

लोतंत्र और पूँजीवाद आधुनिक काल के उन्नतिशील विचार हैं। इस इकाई का उद्देश्य आपको लोकतंत्र के विचारों से, पूँजीवाद के विचारों से और इन दोनों विचारों के बीच के अंतर–संबंधों से परिचित कराना है। इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्नलिखित में सक्षम हो जाएँगेः

- उदार लोकतंत्र और पूँजीवाद के विचारों की व्याख्या करने में;
- उनके बदलते स्वभाव को और उनके बीच के अंतर–संबंधों को स्पष्ट कर पाने में;
- समकालीन समय में इन दोनों विचारों द्वारा सामना किए जाने वाली चुनौतियों पर चर्चा करने में

6.1 परिचय

उदार लोकतंत्र और पूँजीवाद आंतरायिक चुनौतियों के बावजूद सबसे सफल राजनीतिक और आर्थिक प्रणाली साबित हुए हैं। यह इकाई उदार लोकतंत्र और पूँजीवाद विभिन्न आयामों पर चर्चा करती है तथा यह उस अर्थ के योगदान को संपुटित करता है जो ये एक दूसरे के लिए करते हैं। मौलिक रूप से, लोकतंत्र आम लोगों के लिए किए जाने वाली अच्छाई मनाता है और पूँजीवाद व्यक्तिगत भलाई मनाता है। पूँजीवाद असमान संपत्ति अधिकारों के तर्क का अनुसरण करता है जबकि लोकतंत्र का उद्देश्य सबको एक समान नागरिक और राजनीतिक अधिकार देना है। लोकतांत्रिक राजनीति सहमति ओर समझौते में अंतःस्थापित है और पूँजीवाद सभी पदानुक्रमित निर्णय लेने के बारे में है। वुल्फगैंग मर्केल, जो कि लोकतंत्र के विशेषज्ञ हैं, उन्होंने कहा कि पूँजीवाद लोकतांत्रिक नहीं है, लोकतंत्र पूँजीवादी नहीं हैं।

6.2 पूंजीवाद के ऐतिहासिक तटबंध और उदार लोकतंत्र

चूंकि पूँजीवाद एक विचार के रूप में या एक दृष्टिकोण के रूप में हमेशा अपने आदिम अवतार में मौजूद होना चाहिए, पूँजीवाद के आरंभिक चिन्हों की ओर संकेत पाना मुश्किल है। मनुष्य की विकास–यात्रा इस बात की द्योतक है कि प्राकृतिक मनुष्य अपनी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में व्यस्त हो गया और उसने धीरे–धीरे पूँजी/संसाधनों को जमा करना सीखा तथा उद्यम और पूँजी को अप्राप्य धन में बदलने के अनुमान की कला के महत्व को समझा। हालांकि, एक प्रणाली के रूप में पूँजीवाद का विकास 16वीं शताब्दी में शुरू हुआ। पूँजीवाद के जिस औद्योगिक रूप से हम परिचित हैं वह पहली बार इंग्लैंड में 18वीं शताब्दी में विकसित हुआ और यूरोप, उत्तरी अमरीका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड तथा दक्षिण अफ्रीका के अन्य भागों में फैल गया। 19वीं शताब्दी के अंत तक, यूरोपीय औपनिवेशिक शासन के विस्तार के साथ, पूँजीवाद पूरे विश्व पर हावी हो गया।

इस बात की ओर संकेत किया गया कि पूँजीवाद का उदय तीन मुख्य विशेषताओं से जुड़ा हुआ हैः (1) पूँजीवादी भावना की संवृद्धि अर्थात् लाभ की इच्छा, (2) पूँजी का संचय, और (3) पूँजीवादी तकनीकों का विकास। मैक्स वेबर का मानना था कि पूँजीवाद बुद्धिसंगत व्याख्या और तार्किकता का उत्पाद था जो कि आधुनिकता का एक महत्वपूर्ण अभिलक्षण था। इस प्रकार पूँजीवाद उत्पादक उद्यम का एक तर्कसंगत संगठन था। वेतन वाले कर्मचारी या श्रमिक की अवधारणा ने, जो औद्योगिक क्रांति के बाद उभरा, पूँजीवाद के विकास में एक महत्वपूर्ण चरण का संकेत दिया। औद्योगिक क्रांति से पूर्व की आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों के इतिहास पर एक संक्षिप्त नज़र डालने से पता चलता है कि पूँजीवाद न तो कुछ आविष्कारकों के प्रयासों से उत्पन्न हुआ, जो औद्योगिक क्रांति का कारण बने और न ही ब्रिटिश पूँजीवादियों में कुछ विशेष 'उद्यमी भावना' थी। यह सामंतवाद की सामाजिक और आर्थिक प्रणाली की व्यवस्था के टूटने से और उसके स्थान पर वेतन–श्रम प्रणाली लागू होने से उत्पन्न हुआ। कार्ल मार्क्स ने पूँजीवादी व्यवस्था के विकास का ऐतिहासिक और द्वंद्वात्मक विश्लेषण किया तथा इसे पहले सामंती क्रम के अंदर मिलनेवाले विरोधाभासों की उपज माना जाता है। उन्होंने कहा कि पूँजीवाद इतिहास में एक ऐसा चरण था जिसने सामंतवाद की जगह ले ली और इस तरह से सामंतों पर सामंती प्रभुओं का नियंत्रण समाप्त हो गया। गुलामों को कारखाने के कामगारों के रूप में अवशोषित कर लिया गया, यानि कि, बड़े पैमाने पर उत्पादन की नई प्रणाली में मजदूरी करने वाले वेतनभोगी मजदूर इस प्रकार पूँजीवादी व्यवस्था की पकड़ पूरी तरह से स्थापित हो गई। मार्क्स ने कहा कि पूँजीवाद जैसे ही अपनी उच्च श्रेणी स्तर पर पहुँचेगा वह अपने अंतर्निहित अंतर्विरोधों के कारण से टुट जाएगा तथा एक सर्वहारा वर्ग की क्रांति द्वारा उखाड़ फेंका जाएगा। हालाँकि, इस तरह की एक श्रमिक वर्ग की क्रांति केवल अविकसित रूस की स्थापना करने के लिए हुई, जिसकी बाद में राज्य के पूँजीवाद की आलोचना की जाने लगी। जब कम्युनिस्ट गुट का विघटन और पतन हुआ, तो फ्रांसिस फुकायामा, एक अमरीकी राजनीतिक सिद्धांतकार ने उनकी किताब, एन्ड ऑफ हिस्ट्री एंड दी लास्ट मैन में लिखा कि, मानव जाति वैचारिक विकास के अंतिम बिंदु पर पहुँच गई है। सोवियत रूस में साम्यवाद के पतन ने उदार लोकतंत्र

और पूँजीवाद की विजय का संकेत दिया। अगले कुछ वर्षों में, नवउदारवादी विचारों से प्रभावित अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों द्वारा प्राप्त सहायता से उदारवादी बाजारों ने वैश्विक पूँजीवाद का मार्ग प्रशस्त किया। हालांकि, 2008 के हालिया वैश्विक वित्तीय संकट ने समाविष्ट बाजारों के पक्ष में, वैश्वीकरण को वापस लेने और पुनर्वितरण नीतियों को बढ़ावा देने के लिए गति प्रदान की। फुकायामा ने अपने कथन पर फिर से सोचना शुरू किया और आय और संपत्ति में भारी असंतुलन का दूर करने के लिए पुनर्वितरण कार्यक्रम आमंत्रित किया।

लोकतंत्र को आज सफल राजनीतिक प्रणालियों में से एक के रूप में मनाया जाता है, जिसमें व्यावहारिक रूप से कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है। इसका आधारभूत अर्थ है सरकार का एक अभिरूप जिसमें निर्णय लोगों के द्वारा, लोगों के लिए और लोगों का होता है। बहरहाल, लोकतंत्र के असंख्य रूप और प्रकार हैं। आमतौर पर, लोकतंत्र की ऐतिहासिक जड़ें प्राचीन यूनानी शहरों एथेंस और स्पार्टा तक पहुँचती है, जहाँ शहर की विधानसभा में लोगों की प्रत्यक्ष भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाता था। उसके साथ साथ, यूनानी लोकतंत्र की रूपरेखा समस्याग्रस्त भी थी। यह महिलाओं, मेटिक्स्(विदेशी निवासी) और दासों को प्रणाली के वैध प्रतिभागियों के रूप में मान्यता नहीं देता था। हाल के वर्षों में, विचार कि, लोकतंत्र अनिवार्य रूप से एक प्रणाली है जिसकी उत्पत्ति पश्चिमी विश्व में हुई थी और प्रतियोगी के रूप वैदिक साहित्य में सभा और समिति के अभ्यास का संदर्भ लेता है, जहाँ लोग निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेते थे, गैर–पश्चिमी विश्व में भी इस तरह की व्यवस्था का संदर्भ मिला।

उदार लोकतंत्र को विशेष रूप से एक उत्पाद और आधुनिकता की विशेषता के रूप में माना जाता है। शाही निपेक्षता के खिलाफ गृहयुद्ध के परिणामस्वरूप यह अस्तित्व में आया और क्राउन(राजशाही) से संसद में शक्तियों के हस्तांतरण का मार्ग प्रशस्त किया। तब से, उदार लोतंत्र का न केवल भौतिक रूप से विस्तार हुआ, बल्कि उसके अर्थ के संदर्भ में भी परिपक्व हुआ है। 18वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से औद्योगिक पूँजीवाद के विकास के साथ अमरीकी और फ्रांसिसी क्रांतियों ने लोकतंत्र की जड़ों को मज़बूत किया है। लोकतंत्र के विकास में विशेष रूप से उसकी उदारता के अर्थों में, फ्रांसिसियों की मानव अधिकारों की घोषणा(1789), अमरीका की स्वतंत्रता की घोषणा(1776), जॉन लॉक जिसने मनुष्य के अयोग्य अधिकारों का विचार उत्पन्न किया, के राजनीतिक विचारों ने, बेंथम की प्रतिनिधि राजनीति के बचाव ने, जे.एस.मिल का महिलाओं के मताधिकार का समर्थन, ने बहुत योगदान दिया है। लोकतंत्र ने न केवल एक विचार के रूप में, बल्कि विभिन्न सामाजिक–आर्थिक स्तरों, सार्वजनिक शिक्षा और चुनाव सुधारों से संबंधित, जनसंख्या के क्रमिक उत्थान के साथ एक राजनीतिक प्रणाली के रूप में भी बहुत प्रगति की। विश्व की राजनैतिक स्वतंत्रता तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के वर्षों में नए स्वतंत्र हुए देशों द्वारा आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए किए गए दावों ने भी दुनिया के लोकतंत्रीकरण में योगदान दिया।

हालांकि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि लोकतंत्र शब्द से पहले विशेषण 'उदार' व्यक्तिगत स्वतंत्रता, राज्य की भूमिका और बाज़ार की भूमिका के एक विशिष्ट अर्थ और परिभाषा को दर्शाता है। लोकतंत्र की उदार समझ अधिक व्यक्तिगत अधिकारों और राज्य के कम हस्तक्षेप के पक्ष में रही है। उदारवादी

शब्द के दो विपरीत अर्थ हो सकते हैं, उदाहरण के लिए, इसका अर्थ अंकुश की अनुपस्थिति (नकारात्मक स्वतंत्रता) हो सकती है अथवा इसका अर्थ हो सकता है शासन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में सम्बद्ध होने की व्यक्ति की क्षमता। इस प्रकार, स्वतंत्रता/व्यक्तिगत स्वतंत्रता और राज्य की भूमिका के विचार के लिए अपनाए गए अर्थ और परिभाषा के आधार पर लोकतंत्र के विभिन्न संस्करण हैं। उदाहरण के लिए, उदार लोकतंत्र जो कि श्रमिक वर्ग के हितों को प्राथमिकता देता है और व्यक्तिगत/निजी स्वामित्व पर सीमा नियंत्रण का प्रयोग करता है उसे समाजवादी लोकतंत्र माना जा सकता है जबकि जो व्यक्ति की स्वतंत्रता के आनंद से परे समाज के प्रति कर्तव्यों, जिम्मेदारियों और दायित्वों को वरीयता देते हैं, उन्हें कम्युनिस्ट लोकतंत्र माना जा सकता है। और, यदि कोई राजनीतिक प्रणाली पर्यावरण संबंधी चिंताओं या महिलाओं/लिंग से संबंधित चिंताओं को प्राथमिकता देना चाहती है तो ऐसी प्रणालियों में पर्यावरण की ओर और नारीवाद की ओर झुकाव देखा जा सकता है।

6.3 पूंजीवाद और उदार लोकतंत्र क्या है?

आधुनिक अर्थशास्त्र का मैकमिलन शब्दकोष की परिभाषा अनुसार पूँजीवाद, एक राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक प्रणाली है जिसमें पूँजीगत संपत्ति सहित संपत्ति का अधिकांश भाग निजी व्यक्तियों के स्वामित्व और नियंत्रण में होता है। पूँजीवाद निश्चित रूप से एक आर्थिक प्रणाली है जो व्यक्तिगत उद्यमों के लाभ से चालित है। यह निजी स्वामित्व, असंबद्ध स्वतंत्रता, संविदात्मक लेनदेन और आर्थिक प्रतिस्पर्धा के लिए अधिक स्थान की मांग करता है। दूसरे शब्दों में, पूँजीवाद एक ऐसी प्रणाली है जिसमें किसी समाज के संसाधनों का आवंटन मूल्य तंत्र पर आधारित होता है। पूँजीवाद के विभिन्न रूपों में अंतर, मूल्य तंत्र के उपयोग की हद, बाज़ारों में प्रतिस्पर्धा का स्तर और सरकारी हस्तक्षेप का स्तर, तय करते हैं। अपने चरम रूप 'लैस्से फ्येरे' मॉडल(अक्षरशः अर्थ – हमें अकेला छोड़ दें) में, पूँजीवाद सरकारी नियंत्रण और विनियमन के प्रत्येक रूप की उपेक्षा करता है। इस प्रकार की मुक्त बाजार प्रणाली को यदि नियंत्रित और उसकी निगरानी न की जाए, तो वह सबसे क्रूर और बेईमान प्रणालियों में परिवर्तित हो जाती है। पूँजीवाद भी आर्थिक संबंधों के लिए अप्रत्यक्ष शासन की एक प्रणाली है, जहाँ सभी बाज़ार संस्थागत ढ़ांचे के अंदर मौजूद होते हैं जो राजनीतिक अधिकारियों अर्थात (स्कॉट 2006) द्वारा प्रदान किए जाते हैं। इस दृष्टिकोण से, पूँजीवाद किसी भी अन्य संगठित खेल की तरह तीन–स्तरीय प्रणाली है। बाजार प्रथम स्तर पर अधिकार जमाते हैं जहाँ प्रतियोगिता होती है; संस्थागत प्रतिष्ठान (प्रशासनिक और नियामक बुनियादी ढ़ाँचा) जो उन बाजारों को रेखांकित करते हैं वे दूसरे स्तर पर, तथा राजनीतिक प्राधिकरण जो खेल के नियम बनाता है और व्यवस्था को प्रशासित करता है वह तीसरे स्तर पर आता है। दूसरे शब्दों में, समय के माध्यम से प्रभावी विकासात्मक अर्थों में विकसित होने वाली पूँजीवादी व्यवस्था के दो हाथ होने चाहिए, एक नहीं: एक अदृश्य हाथ जो कि मूल्य निर्धारण तंत्र में निहित है और एक दृश्यमान हाथ है जिसे स्पष्ट रूप से सरकार द्वारा विधायिका और नौकरशाही के माध्यम से प्रबंधित किया जाता है।

मैक्स वेबर के अनुसार, पूँजीवादी तर्कसंगत ओर व्यवस्थित रूप से लाभ कमाने का एक दृष्टिकोण है। इसलिए, आर्थिक प्रणाली का यह रूप संसाधनों के निजी स्वामित्व, उत्पादन और वितरण की तर्कसंगत तकनीकों , मुक्त बाजार, मुक्त श्रम शक्ति, अर्थव्यवस्था के व्यावसायीकरण और तर्कसंगत कानून पर पनपता है। दूसरी ओर, कार्ल मार्क्स पूँजीवाद को एक ऐसे प्रगतिशील ऐतिहासिक मंच के रूप में देखते हैं, जिसका अपने आंतरिक विरोधाभासों के भार से ही टूटना तय है। मार्क्स के लिए पूँजीवाद, तीव्र शोषण, वर्ग विभाजन, असमानता और उत्पीड़न की एक प्रणाली है। पूँजीवाद निजी संपत्ति, लाभ के लिए कारखाने प्रणाली के तहत वस्तुओं का बड़े पैमाने पर उत्पादन और श्रमिक वर्ग के अस्तित्व पर पनपता है। यह श्रमिक वर्ग अपनी अपनी श्रम शकित को बाजार में बंचने के लिए मजबूर किया जाता है, और अंततः, यह होने(उत्पादन के साधनों के मालिक या पूँजीपति) और न होने (मजदूरी करने वाले या सर्वहारा वर्ग) के बीच के ध्रुवीकरण का कारण बनती है। मार्क्स का कहना है कि उदार लोकतंत्र में सरकार पूँजीवादी वर्ग की कार्यकारी संस्था के रूप में कार्य करती है। पूँजीपति वर्ग के हाथों में आर्थिक और राजनीतिक शक्ति का ये विलयन सर्वहारा वर्ग के शोषण का कारण बनता है। उनका मानना था कि, जब सर्वहारा वर्ग लड़ने के लिए एकजुट हो जाते हैं तो, उदारवादी लोकतंत्र और पूँजीवाद दोनों एक कम्युनिस्ट समाज की स्थापना के लिए उखाड़ फेंके जाते हैं। इसप्रकार, मार्क्स के अनुसार, पूँजीवाद और लोकतंत्र सर्वहारा वर्ग के शोषण के पीछे के प्रमुख कारक हैं।

इस प्रकार पूँजीवाद को उद्यम की भावना, उत्पादन की एक विशेष विधि और एक वाणिज्यिक प्रणाली के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। पूँजीवाद को काम करने के लिए, एक नियमबद्ध आर्थिक नीति, संवैधानिक रूप से सुनिश्चित की गई बाज़ारों की सुरक्षा तथा विवेकाधीन राजनीतिक हस्तक्षेप से संपत्ति के अधिकार, स्वतंत्र नियामक प्राधिकरण, चुनावी दबाव से सुरक्षित केंद्रीय बैंकों तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की आवश्यकता होती है(स्ट्रीक, 2011)। यामामूरा और स्ट्रीक दो प्रकार के पूँजीवाद के बारे में बात करते हैं; गैर–उदारवादी और उदारवादी पूँजीवाद। वे इन शब्दों का उपयोग विशेष अर्थव्यवस्थाओं में सामाजिक ओर राजनीतिक विनियमन की सीमाएँ बतलाने तथा अधिकतर मौलिक रूप से, 'जिस तरह से राष्ट्रीय समाज अपनी अर्थव्यवस्थाओं को व्यवस्थित करने और वास्तव में जिस हद तक वे ऐसा करते हैं' के लिए करते हैं।

लोकतंत्र मूलतः सहमति से बनी सरकार है जिसमें आवधिक, प्रतिस्पर्धी, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव अनिवार्य हैं। चुनाव प्रमुख संस्थागत प्रक्रिया है जिसके माध्यम से लोकतंत्र कार्य करता है। नागरिकों /शासितों का मत एक लोकतांत्रिक प्रणाली में सर्वोपरि है। सर्वसम्मति–निर्माण की प्रक्रिया उदार लोकतांत्रिक प्रक्रिया के केंद्र में है। डेविड ईस्टन के अनुसार ऐसी सहमति को तीन स्तरों पर उपार्जित करने की आवश्यकता है। (ए) समुदाय स्तर पर आम सहमति (बुनियादी सर्वसम्मति); (बी) शासन स्तर पर आम सहमति (प्रक्रियात्मक सर्वसम्मति), तथा (सी) नीति स्तर पर आम सहमति (नीति सर्वसम्मति)। सर्तोरी कहते हैं कि, लोकतंत्र में, कोई भी शर्त रहित और असीमित शक्ति का उपभोग नहीं कर सकता। शक्ति का सीमित प्रयोग और जवाबदेही लोकतंत्र के प्रमुख तत्व हैं। दूसरे शब्दों में, व्यक्तिवाद, लोकप्रिय संप्रभुता और सीमित सरकार उदार लोकतंत्र की नींव है।

लोकतंत्र को और स्पष्ट करने के लिए, लोकतंत्र के प्रक्रियात्मक पहलुओं के साथ–साथ मूलभूत पहलुओं को समझना आवश्यक है। प्रक्रियात्मक पहलू संवैधानिक ढ़ांचे पर केंद्रित होते हैं, जबकि लोकतंत्र के मूलभूत पहलू हमें विकास और विकास के फलों के समान वितरण के लिए प्रयास करना याद दिलाते हैं। उदार लोकतंत्रों के उदारवादी लोकतंत्र होने का दावा इस दावे पर टिका हुआ है कि उनके पास व्यक्तिगत नागरिकों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए दोनों अच्छी प्रकार से स्थापित और सुलभ प्रक्रियाएँ हैं (वेयर, 1992)। उदार लोकतांत्रिक प्रक्षेपपथ यह भी प्रकट करता है कि स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्य इसके निर्माण खंड हैं। ये मूल्य ही लोकतंत्र के प्रक्रियात्मक पहलू को मजबूत बनाते हैं तथा संसाधनों पर समान रूप से पुनर्वितरण के प्रयासों को सुनिश्चित करने वाले बाजारों पर अनुशासित नियंत्रण में योगदान देता है। उदार लोकतंत्र के दो महत्वपूर्ण घटक हैं – उदारवादी घटक जो राजनीतिक शक्ति पर लगाम की बात करते हैं और लोकतांत्रिक घटक जो लोगों के शासन, भागीदारी और प्रतिनिधि संस्थानों से संबंधित हैं। उदारवाद का अर्थ लोगों को मुक्त करना है और लोकतंत्र 'लोगों को सशक्त बनाने' के लिए खड़ा है। इसका अर्थ अत्याचार ओर मनमानी से लोगों की रक्षा करना भी है। यह लोगों को राजनीतिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। लोकतांत्रिक समाज में लोगों को यह प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए राजनीतिक दल महत्वपूर्ण माध्यम होते हैं। प्रतिनिधित्व का रूप प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, अनुपातिक आदि हो सकता है। प्रत्येक समाज में विभिन्न प्रकार की पार्टी प्रणालियाँ होती हैं जो उस समाज की जनसंख्या की प्रकृति और संरचना पर निर्भर करती हैं। उदाहरण के लिए, किसी अधिक सजातीय समाज में दो–पक्षीय प्रणाली होती है और एक विषम समाज में बहु–पक्षीय प्रणाली होती है। स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्यों को एक उदार लोकतांत्रिक समाज के मौलिक मूल्य माना जाता है। दूसरी ओर, उदार लोकतंत्र से मुक्त बाजार और संपत्ति के अधिकार अविभाज्य हैं। उदारवादी लोकतंत्र की मार्क्सवादी आलोचना इस कारण से है कि आर्थिक समानता के अभाव में राजनीतिक समानता दूरगामी होती है। निजी संपत्ति को समाप्त करके, वर्ग विभाजन को समाप्त करना होगा, जो पूँजीवाद की एक अंतर्निहित विशेषता है। समाजवादी लोकतंत्र का उद्देश्य अनिवार्य रूप से पूँजीवाद को उखाड़ फेंकना है जिसे उदारवादी लोकतंत्र से शक्ति मिलती है। उदारवादी लोकतंत्र की आलोचना गालानो मोस्का, विल्फ्रेडो परेतो और रॉबर्ट मिशेल जैसे संभ्रांत सिद्धांतकारों द्वारा भी की जाती है जो इस ओर इशारा करते हैं कि उदारवादी लोकतंत्र में बड़े पैमाने पर लोगों के बजाय किसी समाज में कुछ संभ्रांत लोग शासन करते हैं।

बोध प्रश्न 1

नोटः 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

2) अपने उत्तर के सुझावों के लिए इकाई के अंत में देखें।

1) मैक्स वेबर के अनुसार, पूँजीवाद के लिए आवश्यक शर्तें कौन सी हैं?

.....

.....

.....

2) निम्नलिखित में से कौन सी शर्त उदार लोकतंत्र के लिए आवश्यक नहीं है?

ए) व्यक्तिवाद ; बी) लोकप्रिय संप्रभुता; सी) लाइसे फेयर और डी) सीमित सरकार

6.4 उदारवादी लोकतंत्र और पूंजीवाद के बीच अंतर्संबंध

अर्थव्यवस्था और राजव्यवस्था मानव समाज के मुख्य समस्या समाधान तंत्र हैं। उन प्रत्येक के अपने विशिष्ट साधन होते हैं, और उनमें से प्रत्येक का अपना 'अच्छा' या अंत होता है। वे आवश्यक रूप से एक दूसरे से परस्पर प्रभावित रहते हैं और इस प्रक्रिया में एक दूसरे में बदलाव ले आते हैं।(एल्मंड, 1991)। एक प्रश्न जो हमें कचोटता है कि पूँजीवाद और लोकतंत्र, जो एक दूसरे से कई प्रकार से विपरीत विचारों के हैं, कैसे दुनिया भर में एक दूसरे के पूरक बन कर सामने आ रहे हैं। पहला असमान असमानताएँ पैदा करता है तथा दूसरा समान राजनीतिक अधिकारों के वितरण के माध्यम से एक समतावादी समाज को तैयार करता है। एक तरफ, ऐसी प्रणाली है जो मुक्त बाज़ार को बढ़ावा देती है और दूसरी ओर ऐसी प्रणाली है जो एक पुनर्वितरण कल्याणकारी राज्य के लिए तरसती है। 1970 के दशक के बाद से बढ़ती मुद्रास्फीति, निजी ऋणग्रस्तता, वित्तीय संकट ने सुरक्षा के लिए बढ़ती मांगों (सरकार द्वारा वित्त पोषित सामाजिक कार्यक्रम, प्रगतिशील कराधान के माध्यम से आय और धन का पुनर्वितरण) के बीच संघर्ष को उजागर किया है जो बाजार के साथ मूलभूत रूप से असंगत है। इन दोनों विचारों के ऐतिहासिक विकास और इसके अभ्यास के बारे में विस्तृत जाँच से पता चलता है कि वे दोनों अपने विरोधाभासी स्वभाव का जवाब देने में कामयाब रहे हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के कल्याणकारी राज्यों के समझौते ने एक अनियमित पूँजीवादी बाजार के परिणामस्वरूप बढ़ती असमानताओं को कम करने की कोशिश की। बाद में, 1970 के दशक में वित्तीय संकट (ब्रेटेन वुड्स) की शुरूआत ने 1980 के दशक के बाद से भूमंडलीकरण, नव–उदारवादी सुधारों के विस्तार क्षितिज को जन्म दिया। इससे कल्याणकारी राज्य के विचार में सेंध लग गई। जबकि राज्य नष्ट नहीं हुआ, उसने पूँजीवाद के वैश्वीकरण के लिए पर्याप्त जगह बनाई। यहाँ दिलचस्प बात यह है कि लोकतांत्रिक राजनीति में एक प्रकार से 'उदार' की मात्रा और प्रकृति एक निर्धारित प्रणाली/समाज के तहत पूँजीवाद के स्थान और संरचना का निर्धारण करती है। उदाहरण के लिए, सरकारें जो संरक्षण और पुनर्वितरण के लोकतांत्रिक दावों पर ध्यान देने में विफल हो जाती हैं उनको अपनी बहुमत की हानि होने का जोखिम होता है जबकि सरकारें जो उत्पादन के संसाधनों के मालिकों से मुआवजे के दावों की अवहेलना करतीं हैं, जैसा कि सीमांत उत्पादकता की भाषा में व्यक्त किया गया है, अर्थिक दुष्क्रिया और विकृतियों का करण बनती है जो तेजी से अस्थिरता की ओर जाती है और इससे राजनीतिक समर्थन भी कमजोर होता है (स्ट्रीक, 2011)।

मार्क्स का मानना था कि पूँजीवाद इसलिए पनपता है क्योंकि सर्वहारा वर्ग का दमन किया जाता है और उसे गलत जानकारियाँ दी जाती है। अपने अंतर्विरोधों के भार तले पूँजीवादी व्यवस्था के पतन की उनकी धारणा अब सही नहीं बैठती क्योंकि पूँजीवाद ने उदारवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंदर खुद को ढ़ालकर और समायोजित करके इन चुनौतियों से बचा लिया है। वास्तव में, आज

पूँजीपति वर्ग लोकतंत्र और नियंत्रण के लिए पुनर्वितरण हेतु अपनी सहमति देती है जिसके परिणामस्वरूप क्रांति का खतरा बढ़ जाता है।

पूँजीवाद और लोकतंत्र के बीच के अंतर्संबंधों के अवलोकन के लिए विभिन्न धारणाएँ, सिद्धांत और दृष्टिकोण हैं। उदाहरण के लिए, चूंकि औसत मतदाता निम्न आय वर्ग के हैं इसलिए अधिक लोकतंत्रीकरण का परिणाम अधिक पुनर्वितरण होता है (मेल्टज़र एंड रिचर्ड मॉडल 1981)। हालांकि, वे विभिन्न देशों में देखी गई पुनर्वितरण की राजनीति में भिन्नता को समझाने से लाभ नहीं मिलता। पूँजीवाद और लोकतंत्र के अध्ययन के लिए अन्य मुख्य दृष्टिकोण राजनीतिक शक्ति की भूमिका पर केन्द्रित होते हैं, विशेषरूप श्रम की संगठनात्मक और राजनीतिक ताकत। यदि पूँजीवाद वर्ग संघर्ष के बारे में होता है, तो वर्गों के संगठन और अंतरंग राजनीतिक ताकत, नीतियों और आर्थिक परिणामों को प्रभावित करती है। इस दृष्टिकोण के दो संस्करण हैं। शक्ति संसाधन सिद्धांत कल्याणकारी राज्य के आकार और संरचना पर ध्यान केद्रिंत करता है, इसे मध्य वर्ग के साथ गठबंधनों द्वारा मध्यस्तता करते हुए राजनीतिक वाम की ऐतिहासिक ताकत के प्रकार्य के रूप में समझा जाता है। दूसरे संस्करण को नियो कॉरपोरेटवादी सिद्धांत कहा जाता है जो श्रम के संगठन और राज्य के साथ उसके संबंधों पर केद्रिंत होता है – विशेष रूप से यूनियनों के केंद्रीकरण की डिग्री और सार्वतनिक निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनके समावेश (आइवरसन, 2006)।

जोसफ शम्पेटर का कहना है कि लोकतंत्र पूँजीवाद की सभ्यता की कहानी काएक भाग है, इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लोकतंत्र ऐतिहासिक रूप से पूँजीवाद द्वारा समर्थित था। पूँजीवाद, समाजवाद और लोकतंत्र (1942) के बारे में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि, 'इतिहास स्पष्ट रूप से पुष्टि करता है कि आधुनिक लोकतंत्र पूँजीवाद के साथ–साथ बढ़ा है और इनका आपस में नैमित्तिक संयोजन है। आधुनिक लोकतंत्र पूँजीवादी प्रक्रिया का एक उत्पाद है'। हालांकि, पूँजीवाद और उदार लोकतंत्र का विकास संघर्षपूर्ण रहा है, इसने विशेषरूप से द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत और कल्याणकारी राज्य के जन्म के बाद से एक मजबूत आधार पाया है (जो कीनेसियन अर्थशास्त्र से प्रेरित था)। कल्याणकारी राज्य नीतियों को अपनाने के तीन दशकों बाद, पश्चिमी दुनिया ने अभूतपूर्व आर्थिक विकास का अनुभव किया जहाँ उदार लोकतांत्रिक राजनीति और पूँजीवादी बाजार एक साथ बढ़े। उदार लोकतंत्र और पूँजीवाद के सामंजस्यपूर्ण सह–अस्तित्व के बारे में हमेशा संदेह रहा। बैरिंगटन मूर के अनुसार, औद्योगिक आधुनिकीकरण केलिए तीन ऐतिहासिक मार्ग हैं। पहला मार्ग ब्रिटेन और फ्रांस ने अपनाया, जहाँ पूँजीपति व्यपारीवाद को बढ़ावा देकर लोकतांत्रिक पूँजीवाद प्रमुखता से उभरा। जापान और जर्मनी ने जमींदार कुलीन तंत्र की मदद से दूसरा मार्ग अपनाया जिससे पूँजीवाद की एक ऐसी प्रणाली का जन्म हुआ जो सैन्य अभिजात वर्ग क प्रभुत्व वाले सामंती अधिनायकवादी ढ़ांचे में संलग्न था। रूस ने राज्य द्वारा नियंत्रित औद्योगिक अर्थव्यवस्था के साथ–साथ एक सत्तावादी कम्युनिस्ट शासन को चुना। इसलिए मूर ने ये निष्कर्ष निकाला कि उन्नीसवीं सदी में उभरते लोकतंत्र की एक नियत विशेषता पूँजीवाद है। रॉबर्ट डाहल ने भी कहा कि 'यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थान मुख्य रूप से निजी स्वामित्व वाले,बाजार उन्मुख

अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों या पूँजीवादी देशों में ही मौजूद हैं जिस नाम को आप पसंद करें'। पीटर बर्गर ने अपनी पुस्तक दी कैपिटलिस्ट रेवोल्यूशन(1986) में पूँजीवाद और लोकतंत्र के संबंधों पर चार प्रस्तावों पर चर्चा की है जो मुख्य रूप से दोनों के बीच संबंधों के सकारात्मक स्वरूप की व्याख्या करते हैं। दूसरी ओर, दोनों के बीच परस्पर विरोधी संबंध हैं। उदाहरण के लिए, फ्रेडरिक वॉन हायकिन ने अपने बाद के वर्षों में आर्थिक स्वतंत्रता और नागरिक स्वतंत्रता की रक्षा में लोकतंत्र को खत्म करने की वकालत की। जॉन स्टर्ट मिल ने ऐसा ही दृष्टिकोण अपनाते हुए कहा कि पूँजीवाद ने लोकतंत्र का नाश कर दिया। इसलिए, उन्होंने एक कम प्रतिस्पर्धी और अंततः एक समाजवादी समाज की कल्पना की। मिल बाजार की अर्थव्यवस्था और प्रमुख राजनीति दोनों की ज्यादतियों को उपभोक्ताओं और उत्पादकों, नागरिकों और राजनेताओं की शिक्षा द्वारा नियंत्रित करना चाहते थे, जो कि नैतिक रूप से बेहतर मुक्त बाजार और लोकतांत्रिक सुव्यवस्था बनाने के हित में होते। थॉमस जेफरसन ने धन–सम्पत्ति में अर्थपूर्ण असमानताओं पर आपत्ति नहीं जताई किन्तु उनका मानना था कि आर्थिक रूप से स्वतंत्र नागरिकता स्वतंत्रता और लोकतंत्र के लिए आवश्यक थी। इसी प्रकार मार्क्स भी बताते हें कि कैसे मुक्त भूमि/संसाधनों तक पहुँच के लिए पूँजीवादी प्रभुत्व और श्रम का शोषण एक बाधा के रूप में कार्य करता है। दूसरे शब्दों में, जब आर्थिक संसाधनों/शक्तियों को समान रूप से वितरित किया जाता है और सरकार द्वारा नियंत्रित किया जाता है तो यह पूँजीवाद पर एक नियंत्रण के रूप में कार्य करता है। गैब्रियल एल्मंड लोकतंत्र और पूँजीवाद के बीच बातचीत के विभिन्न आयामों पर चर्चा करते हैं। वह चार व्यापक प्रकार के अंतर संबंधों की पहचान करते हैं:

1) पूँजीवाद का लोकतंत्र को समर्थन,

2) पूँजीवाद का लोकतंत्र का नाश करना या उसको पलट देना,

3) लोकतंत्र का पूँजीवाद का नाश करना, तथा

4) लोकतंत्र का पूँजीवाद को प्रोत्साहन देना (एल्मंड, 1991)।

इस बात को जानना बहुत आवश्यक है कि लोकतंत्र और पूँजीवाद दोनों सकारात्मक और नकारात्मक रूप से एक दूसरे से संबंधित हैं, वे एक दूसरे को प्रोत्साहन भी देते हैं और विनाश भी करते हैं।

बोध प्रश्न 2

नोटः 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।
2) अपने उत्तर के सुझावों के लिए इकाई के अंत में देखें।

1) लोकतंत्र और पूँजीवाद एक दूसरे को कैसे प्रभावित करते हैं व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

6.5 प्रतियोगिता, तर्क–वितर्क और पूंजीवाद और उदारवादी लोकतंत्र का भविश्य

उन्नीसवीं शताब्दी में आधुनिकता और औद्योगिक पूँजीवाद की छाया में उदार लोकतंत्र का जन्म हुआ, जो बाद में एक वैश्विक घटना बन गई और इसे ऐतिहासिक रूप से स्थापित कर सामाजिक रूप दिया गया। पूर्वव्यापी और दूरदर्शी आज के संदर्भ में पूछे जाने वाले प्रश्न हैं,

1) एक उदार समाज (एक ऐसा समाज जो नागरिक, राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता की गारंटी देता हे, मताधिकार का विस्तार, आवधिक चनाव) पूँजीवाद के निर्वाह और संरक्षण के लिए एक पूर्व शर्त है? तथा

2) क्या इस प्रकार का उदारवादी लोकतांत्रिक विस्तार पूँजीवादी हितों, संस्थानों और संपत्ति संबंधित के साथ है? वैकल्पिक रूप से, इलियट के शब्दों में कहें तो, क्या लोकतांत्रिक राजनीति में कामकाजी जनता द्वारा अधिक से अधिक भागीदारी अर्थव्यवस्था के बाजार आधारित पूँजीवादी व्यवस्था की संभावित पूर्ववत हो सकता है?(1987)।

आज विश्व स्तर पर उदार लोकतंत्र और पूँजीवाद के विकास पर फिर से विचार किया जा रहा है, दुनिया अकल्पनीय समस्याओं और मुद्दों में फंस गई है। अभूतपूर्व तकनीकी और भौतिक प्रगति पूँजीवादी व्यवस्था का एक परिणाम है, लेकिन इसने होने और न होने के बीच एक अकल्पनीय खाई पैदा कर दी है, आर्थिक स्थितियों में अत्यावश्यक दबाव के कारण समूदायों में बढ़ते तनाव, बढ़ते आतंकवाद, बढ़ती बेरोजगारी और सबसे महत्वपूर्ण स्वयं की इच्छा और अव्यवस्थित व्यक्तिों में वृद्धि। फुकुयामा की थीसिस 'एंड ऑफ हिस्ट्री' में इन समकालीन चुनौतियों के सामने उदार लोकतंत्र की जीत हुई, यह विचित्र है। बल्कि इतिहास में त्वरण हुआ है। रॉबर्ट डी कपलान अपने भविष्यसूचक लेख 'द कमिंग एनार्कि' में बताते हैं कि अभाव, अपराध, अधिक आबादी, जनजातीयता और बिमारियाँ तेज़ी से हमारे ग्रह के सामाजिक ताने–बाने को नष्ट कर रहे हैं। आज जो बुनियादी मुद्दा है जिससे मनुष्यों गुज़र रहा है, वो है अपवाद और असमानता की पराकाष्ठा। इसाबेल वी.सॉहिल ने अपने लेख 'कैपिटलिज़म एंड दी फ्यूचर ऑफ डेमोक्रेसी' के प्रारंभ की अकाट्य टिप्पणी में कहती हैं 'अमरीका एक खिचड़ी है। कई अन्य पश्चिमी राष्ट्र भी। लोकप्रियतावाद बढ़ रहा है क्योंकि हमारे बाजार पर आधारित मौजूदा उदार लोकतांत्रिक प्रणाली हमारे नागरिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कम उत्पादन कर रहे हैं।' वे अमरीकी समाज के संदर्भ में परस्पर संबंधित समस्या पर चर्चा कर रही हैं किन्तु उनके तर्क की प्रासंगिकता वैश्विक है। उदाहरण के लिए, कुछ वैश्विक समास्याओं की प्रकृति आर्थिक होती है जैसे बढ़ती असमानताएँ, स्थिर वेतनमान, रोजगार की कमी, पीढ़ियों के बीच की गतिशीलता में कमी, स्वास्थ्य और शिक्षा के निराशाजनक स्तर, सार्वजनिक और निजी ऋण के बढ़ते स्तर, स्थान आधारित असमानताएँ। कुछ अन्य समस्याओं की प्रकृति राजनीतिक होती हैं जैसे कि अति–पक्षपात, प्रभावपूर्ण खरीद और भ्रष्टाचार का उच्चतम स्तर, पक्षाघात और सरकार पर विश्वास में गिरावट। और अंततः कुछ मुद्दे सांस्कृतिक होते हैं जैसे कि, प्रवासियों की नाराजगी तथा नस्ल/जातीय पहचान और लिंग पर बढ़ता तनाव। इन समास्याओं का विभक्त रूप से समाधान नहीं किया जा सकता।

वैश्विक स्तर पर इन आसन्न मुद्दों में जो योगदान दिया गया वह मानसिकता है, जो यह मानती है कि बाजार काम करते हैं परन्तु सरकारें नहीं और सरकारों को बाजारों के काम करने के लिए एक वातावरण बनाना होगा। अधिकांश आधुनिक समाजों में तीन क्षेत्र होते हैं : राज्य, बाजार और नागरिक समाज। अधिकांश राजनीतिक दर्शनों का इन तीनों क्षेत्रों में से एक की ओर निहित पूर्वाग्रह होता है। जहाँ समाजवादियों का झुकाव राज्य की ओर होता है, पूँजीवादी मुक्त बाज़ारों में विश्वास रखते हैं। पूँजीवाद का एक सौम्य संस्करण, जिसको हम उदार लोकतंत्र या मिश्रित–अर्थव्यवस्था मॉडल कहते हैं, बाज़ारों के महत्व को स्वीकार करता हैं, लेकिन सरकार की बाजार की विफलताओं को सही करने और वितरण संबंधी सवालों के समाधान की आवश्यकता को भी पहचानता है। इस प्रकार की 'मिश्रित अर्थव्यवस्था' द्वितीस विश्व युद्ध के बाद से यू.एस. में प्रचलित रही और जिसमें विश्व के कई नेताओं ने महारथ हासिल की (सॉहिल, 2020)। हार्वर्ड के प्रोफेसर माइकल सैंडल का कहना है कि यू.एस. बाजार की अर्थव्यवस्था से निकल कर धीरे–धीरे बाजार के समाज की ओर बढ़ रहा है; यह कहना उचित होगा कि अमरीका के साझा नागरिक जीवन का अनुभव इस बात पर निर्भर करता हे कि उनके पास कितना पैसा है। बाजार अर्थव्यवस्था और बाजार समाजों ने सब कुछ बिक्री योग्य चीजों में बदल दिया है। (माइकल सैंडल की किताब 'व्हॉट मनी कान्ट बाय?' देखें) उदार लोकतांत्रिक पूँजीवाद के विजयी मार्च ने दुनिया भर में राजनेताओं (जैसे बर्नी सैंडर्स आदि) की एक नस्ल को काफी हद तक उभारा है, जिन्होंने आज इस प्रणाली के अभ्यास और इरादों पर प्रश्न उठाया है। दुनिया भर में अकल्पनीय और बढती असमानताओं के मुद्दों से लड़ने और संबोधित करने के लिए समाजवाद में रूचि पुनर्जीवित होती प्रतीत होती है। थॉमस पिकेटी ने अपनी पुस्तक 'कैपिटल इन दी ट्वेंटी–फर्स्ट सेंचुरी(2013)' में तर्क दिया है कि विकसित देशों में पूँजी वापसी की दर लगातार आर्थिक विकास की दर से अधिक रह रही है और इससे भविष्य में धन–संपत्ति की असमानता बढ़ेगी। इस समस्या के समाधान के लिए, पिकेटी ने धन पर प्रगतिशील वैश्विक कर के माध्यम से पुनर्वितरण का प्रस्ताव रखा। हालांकि इस प्रकार के प्रस्तावों का राजनीतिक औचित्य कमजोर है, तथ्य यह है कि इस पर भी चर्चा की जा रही है, अब मुद्दा यह है कि हम दर्शन और इसके विकल्पों के रूप में बाजार पूँजीवाद के बीच लडाई में एक टिपिंग बिंदु के पास हो सकते हैं।

उदार लोकतांत्रिक ओर पूँजीवादी दुनिया की व्यवस्था को उस प्रस्ताव को फिर से प्रस्तुत करने की आवश्यकता है जब बाजार सरकार/राजनीतिक प्रणाली द्वारा पूरक होते हैं। बढ़ती असमानताएँ राजनीतिक व्यवस्था से बाजार के प्रसार पर पर्दा डालने के लिए तत्काल ध्यान आकर्षित करती है। आज पलि से कहीं अधिक अर्थिक शक्ति राजनीतिक शक्ति बन गई है जबकि नागरिकों से लगभग पूरी तरह से उनके लोकतांत्रिक सुरक्षा और राजनीतिक अर्थव्यवस्था के हितों पर प्रभाव डालने की उनकी क्षमता छीन ली गई है तथा पूँजी स्वामियों से अतुल्नीय मांग करते हैं। वास्तव में, 1970 के दशक से लोकतांत्रिक–पूँजीवादी संकट के क्रम को देखते हुए, कोई भी किसी नए के होने की संभावना से डर नहीं सकता है, हालाँकि, अस्थायी पूँजीवाद में सामाजिक संघर्ष का समाधान इस बार पूर्ण रूप से अचित वर्गों के पक्ष में है जो अब उनके राजनीतिक रूप से असंवैधानिक संस्थागत गढ़, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय उद्योग में मजबूती से जमे हुए हैं (स्ट्रीक,

2011)। यह मानना बहुत ही आशावादी और हास्यास्पद होगा कि उदार लोकतंत्र लोगों की बाते सुनने के लिए जगह बनाता है। मार्टिन गिलेंस और बेंजामिन पेज के अनुभवजन्य अध्ययन से पता चलता है कि अर्थिक संभ्रांत वर्ग और संगठित व्यापारिक हितों का एक बड़ा प्रभाव हे, जबकि औसत नागरिक का वास्तव में कोई प्रभाव नहीं है। मध्यम वर्ग के मतदाता का लोकतांत्रिक प्रणाली में विधायी निर्णयों पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। यह उदार लोकतंत्र की एक बहुत ही तिरस्कारपूर्ण आलोचना है क्योंकि यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता सुनिश्चित करने में विफल रहता है और लोकतांत्रिक स्थान अंततः निजी/व्यावसायिक हित से अपहृत है।

दूसरी ओर, इस तथ्य पर भी विचार करना आवश्यक है कि इस अत्यंत उदार लोकतांत्रिक स्थान ने वैकल्पिक राजनीति को सबसे आगे आने का मौका दिया। दुनिया भर में, हम असमानता, नस्लीय/जातीस भेदभाव, लिंग आधारित उत्पीड़न आदि के खिलाफ लोगों की भीड़ में वृद्धि देखते हैं। यह उम्मीद की एक किरण है कि लोकतंत्र अभी भी वैकल्पिक राजनीति के साथ–साथ अर्थशास्त्र के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान दे सकता है। इसाबेल ने बाजार पूँजीवाद द्वारा अपहृत किए जा रहे उदार लोकतंत्रों से दुनिया को बचाने के लिए तीन संभावित विकल्पों पर चर्चा की। वे लोकतांत्रिक समाजवाद (अर्थव्यवस्था में सरकार का हस्तक्षेप), लोकतांत्रिक उदारवाद (मिश्रित अर्थव्यवस्था) और सामाजिक पूँजीवाद (सामाजिक पूँजी और विश्वास का नवीकरण) हैं। ये विकल्प एक आसन्न समस्या के प्रभावी समाधान की पेशकश कर सकते है जो अन्य सभी अंतर्संबंधित समस्याओं की जड़ में हैं, अर्थात असमानता। विलियम गैल्स्टन के शब्दों में : 'यह अकारण है कि एक निश्चित बिंदु से परे आर्थिक असमानता उदार लोकतंत्र के लिए खतरा है'(2018, पृ.135)।

बोध प्रश्न 3

नोटः 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।
2) अपने उत्तर के सुझावों के लिए इकाई के अंत में देखें।

1) समकालीन समय में पूँजीवादी विकास से उत्पन्न कुछ महत्वपूर्ण समस्याओं और मुद्दों की सूची बनाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

6.6 सारांश

जैसा कि हमने इस इकाई में देखा, आधुनिक समय, उदार लोकतंत्र और पूंजीवाद के दो सम्पन्न विचारों ने दुनिया भर में अपनी स्थिति मजबूत कर ली है। प्राचीन यूनान में लोकतंत्र के आरंभ के बाद से, लोगों के अधिकारों के विचार

से जुड़े अर्थ के विस्तार के साथ राजनीतिक मामलों में लोगों की भागीदारी का विचार विकसित हुआ। अठारहवीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति की शरूआत ने उदार लोकतंत्र के विकास में योगदान दिया या यह भी कहा जा सकता है कि दोनों एक दूसरे के पूरक थे। युद्ध के बाद के वर्षों में कल्याणकारी राज्य का उदय उदार लोकतंत्र और निहित पूंजीवाद के बीच एक समझौता था। हालाँकि, 1970 के बाद से वित्तीय संकट ने आर्थिक क्षेत्र और राजनीतिक क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में होने वाले बदलाव में बहुत योगदान दिया है। वैश्विक वित्तीय पूंजीवाद के बढ़ते प्रभाव ने उदार लोकतंत्र की भावना का त्याग कर दिया और अकल्पनीय असमानताओं का कारण बना। इसलिए, ये विचार बाज़ार अर्थव्यवस्था के बाज़ार समाज में परिवर्तित होने को रोकने के लिए फिर से आ खड़े हुए हैं। लोगों, शिक्षाविदों और कार्यकर्ताओं का लोकतांत्रिक भावना में ये विश्वास है कि लोगों की बढ़ती आवाज़ के साथ पूंजीवादी प्रवृत्तियों को यर्थाथ की जाँच के तहत रखा जा सकता है।

6.7 संदर्भ

एल्मंड, जी.ए.(1991). कैपिटलिज़म एंड डेमोक्रेसी. पीएसः पॉलिटिकल साइंस एंड पॉलिटिक्स, 24(3), 467–474।

ढ़ल, आर.ए. (2008). डेमोक्रेसी एंड इटस् क्रिटिक्स. येल युनिवर्सिटि प्रेस।

एलिओट, जे.ई, एंड स्कॉट, जे.वी.(1987). थ्योरीज़ ऑफ लिब्रल कैपिटलिस्ट डेमोक्रेसीः आल्टर्नेटिव पर्सपेक्टिवज़, इंटरनेश्नल जरनल ऑफ सोशल इकोनोमिक्स।

गॉल्स्टन, विलियम. (2018). एंटी–प्लूलरिज़मःदी पॉपूलिस्ट थ्रेट टु लिब्रल डेमोक्रेसी, न्यू हैवन, सीटीः येल युनिवर्सिटि प्रेस।

इवर्सन, टी. (2006). कैपिटलिज़म एंड डेमोक्रेसी. इन दी ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑफ पॉलिटिकल साइंस।

मर्केल. डब्ल्यू. (2014). इज़ कैपिटलिज़म कम्पैटिबल विद डेमोक्रेसी? ZeitschriftfürvergleichendePolitikwissenschaft, 8(2), 109–128।

ओ'सुलिवान, एम. (2005). टाइपोलोजीज़, आइडियोलोजीज़ एंड रीएलिटिज़ ऑफ कैपिटलिज़म. सोशियो इकोनोमिक रिव्यू, 3(3), 547–558।

पिकेटी, टी. (2015). अबाउट कैपिटल इन दी ट्वेंटी–फर्स्ट सेंचुरी. अमेरिकन इकोनोमिक रिव्यू, 105(5), 48–53।

सौहिल, आई. (2020). कैपिटलिज़म एंड दी फ्यूचर ऑफ डेमोक्रेसी. इन कम्युनिटी वैल्थ बिल्डिंग एंड दी रीकंस्ट्रक्शन ऑफ अमेरिकन डेमोक्रेसी. एडवर्ड एल्गर पब्लिशिंग।

शमिटर, पी.सी.(1995). डेमोक्रेसीज़ फ्यूचरः मोर लिब्रल, प्री लिब्रल ऑर पोस्ट लिब्रल? जरनल ऑफ डेमोक्रेसी, 6(1), 15–22।

स्कॉट, बी.आर.(2006). दी पॉलिटिकल इकोनोमी ऑफ कैपिटलिज़्म. हार्वर्ड बिज़नस स्कूल वर्किंग पेपर, न. 07–037।

स्ट्रीक, डब्ल्यू. (2011). दी क्राइसिस इन कॉनटक्स्टः डेमोक्रेटिक कैपिटलिज़्म एंड इटस् कॉन्ट्राडिक्शनस्. मैक्स–प्लैंक– InstitutfürGesellschaftsforschung डिस्कशन पेपर, (11/15)।

वेयर, ए. (1992). लिब्रल डेमोक्रेसीः वन फार्म ऑर मैनी? पॉलिटिकल स्टडीज़, 40(1), 130–145।

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) पूँजीवाद को पनपने के लिए संसाधनों के निजी स्वामित्व, उत्पादन ओर वितरण की तर्कसंगत तकनीक, मुक्त बाज़ार, मुक्त श्रम बल, अर्थव्यवस्था का व्यावसायीकरण और तर्कसंगत कानून जैसी स्थितियों की आवश्यकता होती है।

2) डी

बोध प्रश्न 2

1) अपने उत्तर में निम्नलिखित तीन पहलू शामिल करें: i) उदार लोकतंत्र पूँजीवाद के लिए एक पूर्व शर्त है। ii) उदारवादी लोकतंत्र पर पूँजीवादी इरादे और संस्थाओं का प्रभाव, तथा पूँजीवादी व्यवस्था में सेंध लगाने के लिए लोकतांत्रिक भावना का स्थान।

बोध प्रश्न 3

प) पूँजीवाद ने अभूतपूर्व तकनीकी और भौतिक प्रगति का कारण बना, किन्तु इसने न केवल होने और न होने के बीच अकल्पनीय खाई पैदा की, बल्कि जलवायु परिवर्तन, समुदायों के बीच तनाव, आंतकवाद, बेरोजगारी तथा स्व–इच्छुक और सूक्ष्मवादी व्यक्ति के विकास जैसी स्थितियाँ भी पैदा कर दी।

इकाई 7 समाजवाद और समाजवादी राज्य की कार्यप्रणाली

संरचना

7.0 उद्देश्य

7.1 परिचय

7.2 समाजवाद : पूंजीवाद की समीक्षा

7.3 समाजवाद और समाजवादी विचार का उद्भव

7.3.1 प्रारंभिक समाजवादी

7.3.2 मार्क्सवाद और वैज्ञानिक समाजवाद

7.3.3 अराजक–समाजवाद

7.4 समाजवाद और राज्य का मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य

7.5 समाजवादी राज्य का आविर्भाव

7.6 समाजवादी राज्य की कार्यप्रणाली

7.6.1 पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना (पीआरसी)

7.6.2 क्यूबा

7.6.3 वियतनाम

7.7 समाजवाद और समाजवादी राज्य की समीक्षा

7.8 समकालीन वाद–विवाद : समाजवादी राज्य का भविष्य

7.9 सारांश

7.10 संदर्भ

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

राजनीतिक विचारधारा के तौर पर समाजवाद, पूंजीवाद और पूंजीवाद की उत्पादन रीति के विरोधया विकल्प केरू प में रहा है।य ह इकाई आपको समाजवाद की राजनीतिक विचारधारा और समाजवाद पर आधारित राज्यों की कार्यप्रणली से परिचित कराती है। इस इकाई के अंत में, आपको निम्न को करने में सक्षम होना चाहिएः

- आप समाजवाद और समाजवादी राज्य की अवधारणा की व्याख्या करने में;
- समाजवाद के विकास को बढ़ावा देने वाले कारकों की व्याख्या करने में;
- समाजवाद और समाजवादी राज्यों के उद्भव का पता लगाने में;
- विभिन्न प्रकार के समाजवाद की पहचान करने में;
- समाजवादी राज्यों की कार्यप्रणाली का वर्णन करने में;

- समाजवादी राज्य जिन प्रमुख मुद्दों और चुनौतियों का समाना करता है उनकी व्याख्या करने में।

7.1 परिचय

समाजवाद में राजनीतिक विचार और व्यवहार की समृद्ध परंपरा यह दर्शाती है कि व्यक्तियों की बजाय समाज(समुदाय) को उत्पादन के साधनों का स्वामित्व या नियंत्रण करना चाहिए। इसकी परंपरा के अंदर कई प्रकार के दृष्टिकोण और सिद्धांत हैं, और उनके वैचारिक, अनुभवजन्य और प्रामाणिक प्रतिबद्धताओं में अक्सर भिन्नताएं पाई जाती हैं। इस इकाई में, हम समाजवाद की मुख्य विशेषताओं को, दोनों पूंजीवाद की आलोचना के रूप में और इसके प्रतिस्थापन हेतु एक प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत करेंगे।

एक विचारधारा के रूप में, समाजवाद को कम से कम तीन अलग–अलग तरीकों से समझा गया है। पहला, इसे निजी स्वामित्व और पूंजीवाद के मुक्त–बाज़ार नमूने के विपरीत सामाजिक स्वामित्व और उत्पादन के साधनों के केंद्रीकृत नियंत्रण पर आधारित के रूप में देखा गया है। दूसरा, समाजवाद को कुछ उन राजनीतिक विचारधाराओं, सिद्धांतों या नीतियों के लिए खड़ा पाया गया जो, कुछ मूल्यों, आस्थाओं को सम्मिलित कर सिद्धांतों के साथ जुड़ा होता है जिसे अक्सर 'समाजवादी विचार' या समाजवादी 'दृष्टिकोण' कहा जाता है, जो कि, समतावाद, सामूहिकता, सहयोग, वर्गहीन समाज, आर्थिक समानता आदि मूल्यों को शामिल कर सकता है। तीसरा, समाजवाद की पहचान राजनीतिक और सामाजिक आंदोलनों से भी होती है जो पूंजीवाद को उखाड़ फेंकनें और निजी संपत्ति और मुक्त बाज़ार अर्थव्यवस्था जैसी संरचनाओं को खत्म करने के लिए लड़े गए तथा उनका प्रतिस्थापन 'समाजवादी प्रणाली' से हुआ, जहाँ उत्पादन के साधन सामूहिक रूप से राज्य के स्वामित्व और नियंत्रण में होते हैं। इसलिए, एक समाजवादी राज्य को एक समाजवादी प्रणाली के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जहाँ उत्पादन के साधन राज्य के स्वामित्व या नियंत्रण में होते हैं। इस इकाई में, हम आपको 'समाजवाद' की राजनीतिक विचारधारा और समाजवाद पर आधारित राज्यों की प्रकृति और कार्यप्रणाली से परिचित कराते हैं।

7.2 समाजवाद : पूंजीवाद की समीक्षा

ऐतिहासिक रूप से, समाजवाद ने उन्नीसवीं शताब्दी के शुरूआती दिनों में बौद्धिक संभाषण में औद्योगिक पूंजीवाद द्वारा उत्पन्न 'अनुचित' और 'अन्यायपूर्ण' आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों के खिलाफ प्रतिक्रिया के रूप में अपना रास्ता बनाया। इसलिए, पूंजीवाद ओर पूंजीवादी संरचनाओं के बुनियादी पहलुओं को जाने बिना समाजवाद को पूरी तरह से नहीं समझा जा सकता है। जैसा कि हमने पिछली इकाई में देखा, पूंजीवाद एक राजनीतिक और आर्थिक प्रणाली है जो अप्रतिबंधित आर्थिक गतिविधि और निजी संपत्ति की स्पष्ट मान्यता पर जोर देती है। दूसरे शब्दों में, एक पूंजीवादी व्यवस्था में, उत्पादन के साधन निजी स्वामित्व के अधीन होते हैं और प्रतिस्पर्धा मुक्त बाजार वाली अर्थव्यवस्था एक प्रमुख शक्ति के रूप में काम करती है। फलस्वरूप, व्यवस्था में उत्पादन का

प्राथमिक उद्देश्य समाज की आवश्यकता या लाभ नहीं है, बल्कि उनके व्यक्तिगत लाभ को अधिकतम करने के लिए है जो उत्पादन से बनाया जा सकता है। इसी प्रकार, व्यवस्था में निवेश का विकल्प सामाजिक या सार्वजनिक मांग (जी.ए.कोहेन 2000) के बजाय बाजार में मांग और आपूर्ति से निर्धारित होता है। पूंजीवाद के इस मुक्त–बाजार प्रारूप ने अनिवार्य रूप से उन कुछ लोगों के हाथ में धन संचय करना शुरू कर दिया जो उत्पादन के साधनों के मालिक हैं और उन्हें नियंत्रित करते हैं, जिन्हें 'बुर्जुआ' कहा जाता है। पूंजीपतियों ने तब समाज में अपने प्रभुत्व को मजबूत करने के लिए अपने संचित धन का उपयोग किया। इसलिए, पूंजीवादी समाजों को एक स्पष्ट विभाजन द्वारा चिन्हित किया गया, पूंजीपति वर्ग, जो उत्पादन के साधनों के मालिक हैं तथा 'सर्वहारा वर्ग' जिनके पास अपनी श्रम शक्ति के अतिरिक्त और कुछ नहीं था।

समाजवाद एक राजनीतिक और आर्थिक सिद्धांत के रूप में सामने आया जिसका उद्देश्य, पूंजीवादी उत्पादन रीति को समाजवादी उत्पादन रीति से प्रतिस्थापन करके, पूंजीवाद को अधिक मानवीय और सामाजिक सार्थक विकल्प प्रदान करना है (हेवुड, 2012, 97)। समाजवाद ने पूंजीवाद के निजी स्वामित्व और प्रतिस्पर्धी मुक्त–बाजार प्रणाली को समाज में सामाजिक असमानता के प्राथमिक कारण के रूप में माना और इसलिए राज्य द्वारा निर्देशित और संगठित एक केन्द्रित आर्थिक व्यवस्था की परिकल्पना की गई। इसलिए, समाजवादी अर्थिक प्रणाली को 'सुनियोजित अर्थव्यवस्था' या 'नियंत्रित अर्थव्यवस्था' के रूप में भी जाना जाता है। समाजवाद के अनुसार, चूंकि उत्पादन के साधन समग्ररूप से समाज के अधीन होते हैं, समाज में उत्पन्न होने वाली प्रत्येक चीज़ एक सामाजिक उत्पाद है और उत्पादन से प्राप्त मूल्य भी सामूहिक रूप से समाज से संबंधित होते हैं। यह सिद्धांत 'प्रत्येक की ओर से उसकी क्षमतानुसार से प्रत्येक के लिए उसकी आवश्यकतानुसार' (मार्क्स और एंगल, 1848)। इस संबंध में, अमरीकी समाजवादी डैनियल डे लियोन ने समाजवाद को इस प्रकार परिभाषित किया है कि,'यह एक सामाजिक प्रणाली है जिसके तहत उत्पादन की आवश्यक वस्तुएँ लागों(जनता) के स्वामित्व में होती हैं और नियंत्रित एवं प्रशासित भी लोगों द्वारा ही होती है।'

7.3 समाजवाद और समाजवादी विचार का उद्भव

यद्यपि समतावाद, 'समुदाय' में रहना और श्रम और संसाधनों को साझा करना आदि जैसे समाजवादी विचारों का अस्तित्व पूरे इतिहास में दिखता है, उनकी युक्ति काम करेगी उनके इस विश्वास में कमी थी। यह केवल 1800 के दशक की शुरूआत ही थी जब समाजवाद ने सुधारकों (लोकप्रिय नाम 'प्रारंभिक समाजवादी') जैसे काम्टे हेनरी दे सेंट–साइमन (1760–1825), राबर्ट ओवेन (1771–1858), चार्ल्स फूरियर (1772–1837) और अन्य जिन्हें 'प्रारंभिक समाजवादियों' के नाम से जाना जाता है, उनके लेखन में अपनी पहली उपस्थिति दर्ज की।

7.3.1 प्रारंभिक समाजवादी

इन शुरूआती समाजवादी विचारकों ने समाज में संरचनात्मक असमानताओं, अन्याय और पीड़ाओं पर प्रकाश ड़ाला, जो उनके मुताबिक पूंजीवाद की उत्पादन

रीति से उत्पन्न हुए। उनके अनुसार उत्पादन के साधनोंका निजी स्वामित्व सभी बुराइयों का स्रोत था। संत साइमन ने उस प्रणाली में विश्वास जताया, जहाँ राज्य, समाज के सभी लोगों के लाभ के लिए उत्पादन और वितरण को नियंत्रित करे, जबकि ओवेन और फूरियर ने एक केंद्रीकृत के बजाए छोटे सामूहिक 'आत्मनिर्भर' समुदायों के आधार पर एक प्रणाली का प्रस्ताव रखा। इन प्रारंभिक समाजवादियों का मानना थ कि पूंजीवादियों को समाज के प्रति अपने दृष्टिकोण और व्यवहार को बदलने के लिए विश्वास दिलाकर और श्रमिकों की स्थिति में सुधार करके जैसे पर्याप्त मज़दूरी दे कर, अच्छी आवासीय सुविधा दे कर, अच्छी स्वास्थ्य सेवा देकर, शिक्षा की सुविधा आदि देकर समाजवादी लक्ष्यों को प्राप्त करना संभव है।

हालाँकि, समाजवाद का यह दृष्टिकोण कार्ल मार्क्स (1818–1883) और फ्रेडरिक एंगेल्स (1820–1895) की गंभीर आलोचना का पात्र बनी, जिन्होंने तर्क दिया कि नैतिक सुधार या सामाजिक सुधारों के माध्यम से समाजवाद को प्राप्त करने का विचार न केवल 'अवैज्ञानिक' है बल्कि 'अवास्तविक' या 'काल्पनिक' भी है। मार्क्स और एंगेल्स ने अपने कम्युनिस्ट घोषणापत्र (1848) में, समाजवाद के सिद्धांत को आगे बढ़ाया जिसे उन्होंने 'वैज्ञानिक समाजवाद' कहा, उसे मार्क्सवाद के रूप में भी जाना जाता है।

7.3.2 मार्क्सवाद और वैज्ञानिक समाजवाद

मार्क्स और एंगेल्स के अनुसार वैज्ञानिक समाजवाद, सामाजिक समस्याओं के वैज्ञानिक विश्लेषण और उनके व्यवहारिक समाधान खोजने पर आधारित है। नैतिक सुधार के माध्यम से समाजवादी समाज के निर्माण में विश्वास रखने वाले प्रारंभिक समाजवादियों से भिन्न, मार्क्सवाद ने तर्क दिया कि जब तक उत्पादन के साधनों का निजी स्वामित्व है तब तक श्रमिक वर्ग की स्थिति में सुधार नहीं हो सकता है। उनके अनुसार, समाजवादी समाज की योजना विचारक या सुधारक नहीं बना सकते; यह क्रांतिकारी गतिविधि से उत्पन्न होना चाहिए और ऐतिहासिक रूप से उपयुक्त होने पर ही सफल हो पाएगा। मार्क्सवाद भी यह मानता है कि समाजवाद ऐतिहासिक विकास का एक निश्चित चरण है जिसे संपत्ति के मालिक पूंजीपति वर्ग के खिलाफ मजदूर वर्ग की क्रांति के माध्यम से हासिल किया जाना चाहिए।

मार्क्सवाद समाजवाद के एक लोकप्रिय और प्रभावशाली सिद्धांत के रूप में आंशिक रूप से उभरा, क्योंकि, इसने पूंजीवाद के विश्लेषण में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण और कार्यप्रणाली तथा सैद्धांतिक और व्यवहारिक आधार प्रदान किया, जिस पर समाजवाद विकसित हो सकता था।

7.3.3 अराजक–समाजवाद

समाजवाद का एक और मौलिक रूप है 'अराजक–समाजवाद' (जिसे अराजक–समाजवाद, मुक्तिवादी समाजवाद, स्वतंत्र समाजवाद या सांविधिक समाजवाद भी कहा जाता है) पियरे–जोसेफ प्राउडॉन (1809–1865), पीटर क्रोपोटकिन (1842–1921), मिखाइल बाकुनिन (1814–1876) आदि जैसे लोगों द्वारा विकसित किया गया। समाजवाद के धागे का यह सिरा राज्य सहित सभी रूपों में जबरदस्ती के अधिकार को खारिज करता है जिसमें इसे अवांछनीय,

साम्यवादी समाज के बीच एक से दूसरे के क्रांतिकारी परिवर्तन की अवधि निहित है। इस परिवर्तन की अवधि के दौरान सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता। (मार्क्स, 1875:8) इसलिये मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य में सर्वहारा वर्ग की तानाशाही समाजवाद का अस्थायी या अंतरिम चरण है। इस प्रकार, राज्य का मार्क्सवादी सिद्धांत राज्य का गुणगान नहीं करता; बल्कि यह राज्य के संभावित अंत का सिद्धांत है।

बोध प्रश्न 1

नोटः 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

2) इकाई के अंत में दिए गए मॉडल उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में समाजवाद के उदय में योगदान देने वाला एक प्रमुख कारक है

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) समाजवाद को प्राप्त करने के लिए प्रारंभिक समाजवादियों के प्रस्ताव क्या थे?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7.4 समाजवाद और राज्य का मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य

उदारवाद से भिन्न, जिसने राज्य को विरोधी हितों का निष्पक्ष न्यायकर्ता या व्यक्तिगत अधिकारों और गुणों का रक्षक करार दिया, मार्क्सवाद राज्य को 'वर्ग' के एक ऐसे उपकरण के रूप में देखता है जिसका उपयोग दूसरे वर्ग पर प्रभुत्व के लिए किया जाता है। मार्क्स और एंगेल्स ने इतिहास के अध्ययन के लिए द्वंद्वात्मक पद्धति को लागू करते हुए, यह तर्क दिया कि, इतिहास के विकास के एक निश्चित चरण में समाज की वर्ग की प्रतिरोधी प्रकृति के कारण राज्य अस्तित्व में आए तथा प्रत्येक स्तर पर, यह प्रमुख वर्ग के हित का प्रतिनिधित्व और चाकरी करता है। कम्युनिस्ट घोषणापत्र (1848) में, मार्क्स और एंगेल्स ने ऐतिहासिक परिवर्तन में 'वर्ग संघर्ष' की केंद्रीयता पर प्रकाश डाला और लिखा

कि 'अब तक के मौजूदा समाज का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है'। उन्होंने इतिहास के भौतिकवादी संकल्पना को भी पेश किया, जिसके अनुसार विकास का प्रत्येक चरण पहले के चरण से क्रमानुसार प्रगति थी। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक चरण अपने भीतर विनाश के तत्वों को स्वयं में समाहित करता है और एक अधिक प्रगतिशील चरण में बदल जाता है। यह इस प्रकार सामंती समाज अधिक जटिल और प्रगतिशील पूंजीवाद में विकसित हुआ। इसी प्रक्रिया से, मार्क्सवाद ने तर्क दिया, कि पूंजीवाद का आंतरिक विरोधाभास अनिवार्य रूप से समाजवाद के उच्च स्तर तक ले जाएगा। उदाहरण के लिए, परिवार के मूल में, निजी संपत्ति और राज्य, एंगेल्स ने स्पष्टता से बताया कि पूंजीवाद राज्य एक ऐसे परस्पर–विरोधी वर्ग श्रेणी का उत्पाद है जिसका उद्भव निजी संपत्ति के आविर्भाव और पूंजीवादी उत्पादन रीति से होता है। एंगेल्स केइस विचार को लेनिन के लेखन में और समार्थन मिला, उन्होंने कहा कि 'राज्य वर्ग उत्पीड़न का एक अंग ऐसा है जो वर्गों के बीच के संघर्षों को नियंत्रित करके इस उत्पीड़न को वैधता प्रदान करता है और उसे बनाए रखता है' (लेनिन 1977: 11)। इस प्रकार, मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य में, पूंजीवादी राज्य प्रणाली, सर्वहारा वर्ग के खिलाफ पूंजीपति वर्ग के पक्ष में वर्ग शोषण और उत्पीड़न का एक साधन है।

इसलिए, मार्क्सवाद ने पूंजीवादी राज्य प्रणाली को उखाड़ फेंकने का आह्वान किया और इसके स्थान पर 'वैनगार्ड पार्टी' (लेनिन 1977: 11) के नेतृत्व में एक समाजवादी राज्य व्यवस्था की स्थापना करने के लिए सर्वहारा वर्ग की हिंसापूर्ण क्रांति को माध्यम बनाया। सर्वहारा वर्ग और उनकी वैनगार्ड पार्टी के कार्य पर टिप्पणी करते हुए, लेनिन ने कहा कि सर्वहारा वर्ग का उद्देश्य पूंजीवाद और पूंजीपति वर्ग को उखाड़ कर समाजवादी व्यवस्था स्थापित करना है। लेकिन यह उद्देश्य, उसके अनुसार एक झटके में हासिल नहीं किया जा सकता था; इसके लिए पूंजीवाद से समाजवाद में अवस्थांतरण को एक लंबी अवधि की आवश्यकता थी। परिवर्तन की इस अवधि को 'सर्वहारा वर्ग की तानाशाही' कहा जाता है, जो राज्य का समाजवादी रूप है। अपनी किताब 'स्टेट एंड रेवोल्यूशन' में, लेनिन ने (1967) लिखा, सर्वहारा वर्ग के राजनीतिक सत्ता पर काबिज होने के बाद, सर्वहारा वर्ग की क्रांतिकारी तानाशाही की मौजूदगी से, पूंजीपतियों के प्रतिरोध को नष्ट करने की आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में, सर्वहारा वर्ग के निरंकुशता के तहत राज्य अभी भी एक वर्ग राज्य है और वर्ग का विभाजन होगा। सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का उद्देश्य निजी स्वामित्व से राज्य संपत्ति तक उत्पादन के साधनों को स्थानांतरित करके समाज से पूंजीवादी तत्वों को हटाने के लिए राज्य शक्ति का उपयोग करना है। इस संबंध में मार्क्स ने कहा कि, सर्वहारा राज्य समाजवाद का 'पहला' चरण(या 'निचला' चरण) है और इसका अंतिम उद्देश्य 'साम्यवाद' के रूप में विदित एक मूर्तिहीन और अंतिम अवस्थांतरण के लिए परिस्थितियाँ बनाना होगा, जिसे मार्क्स ने 'दूसरा चरण' (या उच्चतर चरण) कहा। इसलिए मार्क्स ने समाजवाद या समाजवादी राज्य को 'अपरिपक्व' या साम्यवाद का 'अजीर्ण' रूप कहा।

साम्यवाद में, जो समाजवाद का अंतिम चरण है, समाज वर्ग और वर्ग के प्रतिरोधों से मुक्त हो जाएगा और राज्य 'नष्ट' हो जाएगा। इस संबंध में, मार्क्स ने अपनी किताब 'क्रिटिक टू दी गोथा प्रोग्राम(1875) में कहा, 'पूंजीवादी और साम्यवादी समाज के बीच एक से दूसरे के क्रांतिकारी परिवर्तन की अवधि निहित

है। और इस परिवर्तन की अवधि के दौरान सर्वहारा वर्ग की तानाशाही के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकता (मार्क्स, 1875:8)। इसलिए, मार्क्सवादी परिप्रेक्ष्य में, सर्वहारा वग की तानाशाही साम्यवाद के प्रति समाजवाद का ऐ अस्थायी या अंतरिम चरण है। इस प्रकार, राज्य का मार्क्सवादी सिद्धांत राज्य का गुणगान नहीं करता; बल्कि यह राज्य के संभावित अंत का सिद्धांत है।

7.5 समाजवादी राज्य का आविर्भाव

बीसवीं शताब्दी की शुरूआत में, यूरोप में कई तरह के समाजवादी दल और समूह थे – अपेक्षाकृत उदारवादी 'फैबियन' समाजवादी से लेकर या 'गिल्ड' समाजवादी से लेकर अत्यधिक कट्टरपंथी 'मार्क्सवादी' और 'अराजकतावादी' समाजवादियों तक। हालांकि, वे इस आम सिद्धांत पर सहमत थे कि पूंजीवाद को समाप्त किया जाना चाहिए, फिर भी, समाजवादी कार्यक्रम को कैसे निष्पादित किया जाना चाहिए, इस पर विविध वैचारिक और दार्शनिक दृष्टिकोण हैं। जबकि सुधारवादी या विकासवादी समाजवादी शांतिपूर्ण और लोकतांत्रिक साधनों के माध्यम से समाजवादी लक्ष्यों को प्राप्त करने में विश्वास करते हैं, और कट्टरपंथी या क्रांतिकारी समाजवादियों ने श्रमिक वर्ग के नेतृत्व वाली क्रांति के माध्यम से समाजवाद लाने में विश्वास किया।

यद्यपि समाजवादियों में हमेशा सुधार और क्रांति के बीच बहस छिड़ी रही, इसका प्रभाव मार्क्सवाद पर भी पड़ा। सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी(जिसका परिवर्णी शब्द, एसपीडी है): के दो प्रमुख मार्क्सवादी सदस्यों एडुआर्ड बर्नस्टीन और रोज़ा लक्ज़मबर्ग के बीच की बहस में सामने आया। जर्मनी में बर्नस्टीन के औद्योगिक और कृषि विकास के विश्लेषण ने उन्हें विश्वास दिलाया कि पूंजीवाद समाज में परिवर्तन के लिए अनुकूल था और मार्क्स की आसन्न और अपरिहार्य भविष्यवाणी में पूंजीवाद का अंत कहीं नहीं था। बर्नस्टीन का मानना था कि समाजवादियों को पूंजीवाद को संकट की स्थिति में लाने का और समाजवाद के कुछ अंतिम परिणामों को प्राप्त करने का लक्ष्य छोड़ देना चाहिए। समाजवादी आंदोलनों का उद्देश्य कुछ अर्थों में समाजवाद को प्राप्त करना नहीं है, बल्कि श्रमिकों के जीवन को बेहतर बनाने के लिए एक ताकत के रूप में उपस्थित रहना है। उनका प्रसिद्ध लेखः ' मेरे लिए, जिसे आम तौर पर समाजवाद का अंतिम उद्देश्य कहा जाता है, कुछ भी नहीं है, लेकिन आंदोलन सब कुछ है' (1899) लक्समबर्ग; दूसरी ओर, तर्क दिया कि सुधारवादियों ने वैज्ञानिक समाजवाद की दृष्टि खो दी है। उसने तर्क दिया कि सामाजिक क्रांति में समाजवाद का अंत है तथा बर्नस्टीन के सुधारवादी दृष्टिकोण 'सलाह के अनुसार व्यवहार में **[....]** कि हम सामाजिक क्रांति को छोड़ते हैं – सामाजिक लोकतंत्र का लक्ष्य – और वर्ग संघर्ष के साधनों से सामाजिक सुधार को अपने अंतिम उद्देश्य में बदल देंगे' (गे, 1952, 259)।

सन् 1917 में, व्लादिमीर इलिच लेनिन (1817–1924) के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने रूस में सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया और इतिहास में पहला समाजवादी राज्य स्थापित किया। बीसवीं शताब्दी में रूसी क्रांति की सफलता ने मानव जाति के इतिहास पर गहरा प्रभाव डाला। आप इस कार्यक्रम के अन्य पाठ्यक्रमों में इन घटनाओं के बारे में पढ़ेंगे। यहाँ आपको ध्यान देना चाहिए कि रूसी क्रांति ने परिवर्तनवादी एवं विकासपरक समाजवादी समूहों को बड़ी चुनौती दी।

वे लेनिन और उनके सहयोगियों को साथी समाजवादियों के रूप में समर्थन दे सकते थे, जो एक श्रमिक क्रांति के माध्यम से पूंजीवादी राज्य को उखाड़ फेंकने में सफल रहे, या वे उन सत्तावदी लोगों के रूप में उनका विरोध कर सकते थे जो असल में समाजवाद की लोकतांत्रिक भावना का त्याग कर रहे थे। यूरोप और अमरीका में समाजवादी पार्टियाँ सोवियत समर्थक कम्युनिस्ट पार्टियों और अधिक पारंपरिक सामाजिक लोकतांत्रिक पार्टियों में विभाजित हो गईं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमरीका में, दो समर्थक सोवियत दलों (कम्युनिस्ट लेबर पार्टी और कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ अमेरिका) कम्युनिस्ट पार्टी यूएसए के गठन के लिए विलय करने से पहले, सोशलिस्ट पार्टी ऑफ अमेरिका से अलग हो गए। इसी प्रकार, फ्रांस में, फ्रांसिसी कम्युनिस्ट पार्टी का गठन फ्रांसिसी सेक्शन ऑफ वर्कर्स इंटरनेश्नल (एसएफआईओ) से टूटे हुए गुट से हुआ था। गैर–साम्यवादी समाजवादी दल सोशलिस्ट इंटरनेशनल (या 'सैकंड इंटरनेशनल' क्योंकि यह मार्क्स के मौलिक इंटरनेशनल वर्किंगमेनस् एसोसिएशन का उत्तरीाधिकारी है) के सदस्य बन गए, जबकि सोवियत संघ ने कम्युनिस्ट पार्टियों को कम्युनिस्ट इंटरनेशनल (जिसे 'कॉमिन्टर्न' या थर्ड इंटरनेशनल के रूप में भी जाना जाता है) में संगठित किया।

रूसी क्रांति दुनिया भर में विभिन्न उपनिवेशवाद विरोधी राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों की प्रेरणा बन गई। सन् 1920 में, कॉमिन्टर्न के मार्गदर्शन में इंड़ोनेशियाई कम्युनिस्ट पार्टी के गठन के साथ, इंडोनेशिया सोवियत संघ के बाहर कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना करने वाला पहला देश बन गया, जिसके बाद 1921 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी (सीसीपी) आई। द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद, समाजवाद के सोवियत मॉडल को पूर्वी यूरोप के अधिकांश देशों ने अपनाया, जिनमें क्रोशिया, रोमानिया, हंगरी, पोलैंड, पूर्वी जर्मनी आदि शामिल थे। बाद में, माओत्से तुंग ने 1949 में चीनी क्रांति का नेतृत्व किया और पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना (पीआरसी) की स्थापना एक समाजवादी राज्य के रूप में की, जो बाद में उत्तर कोरिया, वियतनाम, कंबोडिया और लाओस तक फैल गया। सन् 1960 और 1970 के दशक में, समाजवाद मध्य और दक्षिण अमरीका में कई क्रांतिकारी संघर्षों का मार्गदर्शक मंत्र बन गया। उदाहरण के लिए, क्यूबा के समाजवादी फिदेल कास्त्रो ने 1959 में एक सफल क्रांति के बाद अमरीका समर्थित बतिस्ता शासन को उखाड़ फेंका और सत्ता में आए। अर्जेंटीना के क्रांतिकारी चे ग्वेरा ने भी दक्षिण अमरीका (बोलीविया, वेनेजुएला, चिली आदि) के कई देशों में विभिन्न गोरिल्ला (छापामार) संघर्षों के नेतृत्व किया और 1975 में उनकी मृत्यु के बाद, क्रांतिकारी समाजवाद विद्रोह का प्रतीक बन गया। परिणामस्वरूप, कई समाजवादी नेता सत्ता में आए, जैसे कि 1970 में चिली में साल्वाडोर अलेंदे और 1979 में निकारागुआ में सैंड़िनेस्टा गुरिल्ला। पश्चिम एशिया और उत्तरी अफ्रीका में अफ्रीकी समाजवाद या अरब समाजवाद जैसे पारंपरिक और आदिवासी मूल्यों के साथ समाजवाद के विचारों का सम्मिश्रण करते हुए समाजवाद भी संश्लेषित रूप में विकसित हुआ। हालांकि, 1991 में सोवियत संघ के अंत ने दुनिया के अन्य हिस्सों में समाजवादी विचारधारा और समाजवादी राज्य प्रणालियों को एक बड़ा झटका दिया। इस उथल–पुथल के बावजूद, कुछ राज्य जो खुद को समाजवादी राज्य के रूप में पहचानते हैं, अभी भी अस्तित्व में हैं। वर्तमान में, पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना, रिपब्लिक ऑफ क्यूबा, सोशलिस्ट रिपब्लिक ऑफ वियतनाम और नार्थ कोरिया जैसे देश जो

स्व–घोषित समाजवादी राज्य हैं जो समाजवाद के सिद्धांत का पालन करने का दावा करते हैं।

7.6 समाजवादी राज्य की कार्यप्रणाली

मार्क्सवादी–लेनिनवादी परिप्रेक्ष्य में, एक समाजवादी राज्य वह राज्य हैं जो श्रमिक(सर्वहारा) वर्ग के नियंत्रण में है, जो समाजवाद की प्राप्ति क दिशा में काम करता है। समाजवादी राज्यों में वैनगार्ड पार्टी द्वारा शासन किया जाता है, जो अधिकतर एक कम्युनिस्ट पार्टी होती है, जो समाजवादी अर्थव्यवस्था और समाजवादी समाज की स्थापना के लिए देश की उत्पादक शक्तियों को नियंत्रित करती है। हालांकि, चीन, क्यूबा और वियतनाम में समाजवाद के निर्माण की सामान्य आकांक्षाएँ हैं, लेकिन उनके कामकाज की प्रकृति में अंतर है।

7.6.1 पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना (पीआरसी)

पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना(पीआरसी) शायद सबसे प्रमुख और शक्तिशाली देश है जो आज एक समाजवादी राज्य के होने का दावा करता है। अन्य समाजवादी राज्यों की तरह, चीन चाइनीज़ कम्युनिस्ट पार्टी (सीसीपी) द्वारा शासित है, जो 1949 में अपनी स्थापना के बाद से एकमात्र सत्ताधारी पार्टी है। जबकि चीन अन्य समाजवादी राज्यों की कई विशेषताएँ साझा करता है, फिरभी यह यूएसएसआर जैसे पारंपरिक समाजवादी राज्यों से अलग है। सोवियत समाजवाद के विपरीत जो दृढ़ है, चीन में विविधता का समाजवाद बहुत लचीला है जिसे चीनी स्थिति के अनुकूल बनाने के लिए कई बार संशोधित किया गया है। चीन में, सोवियत समाजवाद एक असफल समाजवाद का नकारात्मक प्रतिबिंब दिखाता है तथा सोवियत समाजवाद की आलोचना चीन के समाजवादी संभाषण की प्रमुख विशेषता रही है। 1960 के दशक के प्रारंभ में चीन–सोवियत विभाजन समाजवाद के दो संस्करणों के बीच प्रतिस्पर्धा का परिणाम था। चीन ने एक अनूठे प्रकार के समाजवाद को अपनाया जिसको चीन देश का संविधान 'चीनी विशेषताओं के साथ समाजवाद' के रूप में वर्णित करता है। एकल पार्टी द्वारा स्थापित सोवियत मॉडल का अनुसरण करने के बजाय, चीन की राजनीति प्रणाली आठ छोटे दलों को सीसीपी के साथ मौजूद होने की स्वीकृति देती है। हालांकि, चीन की राजनीति प्रणाली को 'एक–दल' राज्य माना गया है क्योंकि सीपीसी एक मात्र सत्ताधारी पार्टी है जो राजनीतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का निर्धारण करती है, जबकि छोटी पार्टियाँ इस शर्त पर अस्तित्व में रहती हैं कि वे सीपीसी के प्रति 'नेतृत्व की भूमिका' निष्ठा रखेंगी।

चीन–सोवियत विभाजन में सैद्धांतिक कारक

मार्क्सवादी सिद्धांत का तर्क था कि पूंजीवाद के खिलाफ क्रांति सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में होगी, यानी शहरी श्रमिक वर्ग। रूस में, मध्यम वर्ग के वामपंथी कार्यकताओं ने छोटे शहरी सर्वहारा वर्ग के कुछ सदस्यों को उनके मनोरथ और 1971 में सत्ता हासिल करने के लिए सम्मिलित किया। सोवियत संघ ने चीनियों और अन्य कम्युनिस्टों को भी उसी रास्ते पर चलने के सलाह दी। चीनी कम्युनिस्ट नेता, माओत्से तुंग को इस सलाह को अस्वीकार करना पड़ा क्योंकि चीन में अभी तक एक भी शहरी श्रमिक वर्ग नहीं था। बल्कि, माओ ने ग्रामीण किसानों पर अपनी क्रांति का आधार बनाया।

सोवियत नेताओं की झुंझलाहट,दक्षिण पूर्व ऐशिया(उत्तर कोरिया, कंबोडिया और वियतनाम) में शहरी सर्वहारा वर्ग की कमी के कारण, नक्सलियों ने शास्त्रीय मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धांत के बजाय माओवादी मार्ग का अनुसरण किया। 1960 के दशक के प्रारंभ में, इन मतभेदों ने भू रणनीतिक कारकों के साथ मिलकर सोवियत संघ और चीन के बीच राजनीतिक संबंधों को तोड़ दिया। दोनों देश विश्व साम्यवाद के नेतृत्व के लिए प्रतिस्पर्धा करने लगे।

अन्य अधिकांश समाजवादी राज्यों की तरह, चीन ने भी 'पार्टी–राज्य' के कम्युनिस्ट सिद्धांत को अपनाया, जिसमें पार्टी हमेशा राजनीतिक सत्ता पर अपना एकाधिकार रखती है और सरकार(राज्य) पर नियंत्रण रखती है। पार्टी के नेतृत्व को बनाए रखने के लिए सीसीपी के शीर्ष क्रम के नेतृत्व एक साथ राज्य(सरकार) के कार्यकारी और निर्णय लेने वाले पदों पर रहते हैं। उदाहरण के लिए, हालाँकि पीआरसी का अध्यक्ष (जो राज्य का प्रमुख है) औपचारिक रूप से नेशनल पीपुल्स कांग्रेस(एनसीपी) द्वारा चुना जाता है, वास्तव में, इसकी पसंद केवल एक उम्मीदवारतक सीमित है जो आमतौर पर पार्टी का प्रमुख होता है, यानी सीपीसी के महासचिव। इसी प्रकार, प्रीमियर(अनौपचारिक रूप से प्रधानमंत्री के रूप में संदर्भित), उप–प्रीमियर और राज्य परिषद के अन्य सदस्यों को औपचारिक रू॰ से एनसीपी द्वारा अनुमोदित किया जाता है, व्यवहारिक रूप से उनकी उम्मीदवारी का अग्रिम रूप से चुनाव और अनुमोदन पार्टी के अंदर किया जाता है। चूंकि सरकार के प्रमुख अधिकारियों को पार्टी द्वारा चुना जाता है, यह पार्टी ही है जो नीतियाँ तय करती है जबकि सरकार उन नीतियों को निष्पादित और कार्यान्वित करती है।

विश्व की किसी भी अन्य कम्युनिस्ट पार्टी की तरह, सीसीपी हमेशा सत्ता पर अपनी पकड़ बनाए रखने चाहती है क्योंकि सत्ता पर नियंत्रण करना ही समाजवादी व्यवस्था का सार है। इस संबंध में, सीसीपी ने प्रेस को सेंसर करने, नागरिक समाज और असंतुष्टों को दबाने तथा बल का उपयोग करने जैसे विभिन्न माध्यमों से अपने नियंत्रण को मजबूत किया। पार्टी प्रमुख पदों पर अपने सदस्यों को नियुक्त करके सेना, न्यायपालिका और अन्य प्रशासनिक तंत्र को भी नियंत्रित करती है। पार्टी व्यक्तिगत हितों से ऊपर है, और प्रत्येक नागरिक या पार्टी सदस्य पार्टी के फैसलों का पालन करने के लिए बाध्य है। प्राधिकरण का पालन करना प्रत्येक नागरिक का नैतिक या देशभक्तिपूर्ण कर्तव्य माना जाता है।

7.6.2 क्यूबा

क्यूबा गणराज्य एक और देश है जो खुद की पहचान 'मज़दूरों का स्वतंत्र और संप्रभु समाजवादी राज्य' के रूप में करता है। जनवरी 1959 में फिदेल कास्त्रों ने एक सफल क्रांति के बाद, क्यूबा में मार्क्सवाद–लेनिनवाद की शुरूआत की और क्यूबा में कम्युनिस्ट पार्टी के तहत एक कम्युनिस्ट शासन की स्थापना की । तब से, मार्क्सवाद–लेनिनवाद पार्टी की मार्गदर्शक विचारधारा बनी हुई है। क्यूबा के संविधान में पार्टी का वर्णन 'राष्ट्र के अग्रणी दल के रूप में किया गया है, जो समाज और समाजवाद के निर्माण और उन्नति के सर्वोच्च लक्ष्यों को पाने के लिए राष्ट्र और समाज का नेतृत्व करता है। चीन के विपरीत, क्यूबा ने सोवियत मॉडल पर एकल–पार्टी प्रणाली का पालन किया, जिसके तहत क्यूबा की

कम्युनिस्ट पार्टी देश पर शासन करने वाली एकमात्र पार्टी बनी रहेगी। एक समाजवादी देश के रूप में, क्यूबा का संविधान 'उत्पादन के मूलभूत साधनों पर लोगों का समाजवादी स्वामित्व और मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के उन्मूलन' पर आधारित एक समाजवादी अर्थव्यवस्था को परिभाषित करता है। यह समाजवादी वितरण के सिद्धांत का पालन करता है 'प्रत्येक से उसकी क्षमता के अनुसार और प्रत्येक को उसके कार्य के अनुसार'। फिर से, क्यूबा संविधान का अध्याय IX संगठन के सिद्धांतों और राज्य के अंगों के कामकाज से संबंधित है। राज्यों के अंग समाजवादी लोकतंत्र के सिद्धांतों पर आधारित है। नेश्नल असेंबली ऑफ पीपुल्स पावर सभी कामकाजी लोगों की संप्रभु इच्छा का प्रतिनिधित्व करने वाला राज्य का सर्वोच्च अंग है। यह एक गुप्त मतदान प्रणाली के माध्यम से पाँच साल के लिए चुने गए प्रतिनिधि(डेप्युटीज़) से बना है। विधानसभा तब राज्य परिषद का चुनाव करती है जिसमें राष्ट्रपति होता है, जो एक ही समय में, राज्य का प्रमुख और सरकार का प्रमुख होता है।

अन्य समाजवादी राज्यों की तरह, क्यूबा संचार माध्यमों, रेडियो और टेलिविज़न आदि जैसे संचार माध्यमों को बंद करके किसी भी असंतुष्ट आवाज़ के खिलाफ सख्त आदेश–पत्र(प्रोटोकॉल) बनाए रखता है। हालांकि क्यूबा ने 1992 के संवैधानिक संशोधन जैसे राजनीतिक लोकतंत्रीकरण के लिए कुछ प्रयास वैकल्पिक राजनीतिक दलों को अनुमति देने के लिए किए, कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ क्यूबा ने इस तरह के राजनीतिक सुधार के लिए जगह नहीं दी। और क्यूबा बिना किसी विरोधी पार्टी के एक पार्टी के राज्य के रूप में बना हुआ है। क्यूबा की राजनीतिक प्रणाली का यह समाजवादी चरित्र 2002 में अंतिम संवैधानिक सुधार के बाद और भी गहरा हो गया है, जिसने समाजवाद को 'अखंडनीय' के रूप में स्थापित किया और घोषणा की कि देश पूंजीवाद की ओर कभी वापस नहीं आएगा। इसका क्यूबा के लोगों द्वारा बड़े पैमाने पर समर्थन किया गया और इसलिए, क्यूबा का राज्य भविष्य में अपने मौजूदा समाजवादी विशेषताओं के साथ जारी रहने की संभावना है।

7.6.3 वियतनाम

सोशलिस्ट रिपब्लिक ऑफ वियतनाम एक एकल–पार्टी समाजवादी राज्य है, जो कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ वियतनाम(सीपीवी) द्वारा शासित है, जोकि देश की संस्थापक और शासक पार्टी है। यह पार्टी और राज्य दोनों के लिए मार्गदर्शक विचारधाराओं के रूप में 'मार्क्सवाद–लेनिनवाद' और 'हो ची मिन्ह के विचारों' का समर्थन करता है। 1930 में क्रांतिकारी कम्युनिस्ट नेता हो ची मिन्ह के नेतृत्व में सीपीवी की स्थापना हुई, जिन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता और मेहनतकश लोगों के लिए भूमि के पुनर्वितरण के लिए लड़ाई लड़ी। पार्टी 1945 में सत्ता में आई, उन्होंने डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑफ वियतनाम के निर्माण की घोषणा की, जिसे उत्तर वियतनाम भी कहा जाता है, जो कि एक समाजवादी राज्य है। 1975 में दक्षिण वियतनाम पर सत्ता पर कब्जा करने के बाद, देश का नाम बदल कर 'रिपब्लिक ऑफ वियतनाम' कर दिया गया। सीपीवी आज तक देश पर शासन कर रहा है। देश के संविधान की प्रस्तावना में वियतनाम को 'समाजवाद में अवस्थांतरण की अवधि में' घोषित किया गया है और 'पार्टी–राज्य' के

समाजवादी सिद्धांत को अपनाकर, सीपीवी देश के सभी बड़े नीतिगत फैसलों को निर्धारित करता है और उनका पालन करता है।

बोध प्रश्न 2

नोटः 1) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

2) इकाई के अंत में दिए गए मॉडल उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) सर्वहारा वर्ग की तानाशाही क्या है? यह क्यों आवश्यक है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) समाजवादी राज्यों में एकल दल प्रणाली के अस्तित्व का क्या कारण है?

.....

.....

.....

.....

.....

7.7 समाजवाद और समाजवादी राज्य की समीक्षा

पूंजीवादी विचारकों ने समाजवाद और समाजवादी राज्यों की आलोचना कई आधारों पर की है। कुछ आलोचक समाजवाद को एक विशुद्ध सैद्धांतिक अवधारणा मानते हैं, और उनका मानना है कि आलोचना को सैद्धांमिक आधार पर बनाया जाना चाहिए; जबकि अन्य का मानना है कि चूंकि समाजवादी राज्य एक किसी न किसी रूप में मौजूद, इसलिए इसकी व्यावहारिक रूप से आलोचना की जानी चाहिए। अमरीकी अर्थशास्त्री और पूंजीवाद के मुक्त बाज़ार के समर्थक मिल्टन फ्रेडमैन (1962) तर्क देते हैं कि राज्य–स्वामित्व का समाजवादी सिद्धांत और निजी स्वामित्व को समाप्त करना अनिवार्य रूप से सामान्य आबादी के लिए बदतर आर्थिक स्थिति पैदा करेगा। उनके अनुसार, निजी स्वामित्व और बाज़ार विनिमय 'स्वाभाविक स्थितियाँ' या 'नैतिक अधिकार' हैं जो स्वतंत्रता और अधिकार की धारणाओं के केंद्र हैं। इसलिए, निजी स्वामित्व पर कोई भी प्रतिबंध अधिकार पर उल्लंघन है। फ्रेडमैन ने भी कहा कि समाजवाद का आर्थिक प्रतिबंध, प्रतिस्पर्धा को दबाने के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति में बाधा डालता है। उन्होंने समाजवादी देशों में तकनीकी पिछड़ेपन की ओर इशारा किया, जिसकी तुलना उन्नत पूंजीवादी देशों से की जाती है, जहाँ व्यक्ति और कंपनियाँ प्रौद्योगिकियों के अनुसंधान और विकास के लिए स्वतंत्र है। इस मामले में एक उत्कृष्ट उदाहरण है नितांत विषमता वाला पूँजीवादी दक्षिण कोरिया और समाजवादी उत्तर कोरिया।

फ्रेडमैन केविचार को अन्य उदार अर्थशास्त्री जैसे फ्रेडरिक हायक, लुडविग वॉन मिज़ और जॉन मेनार्ड केन्स ने साझा किया, उनका मानना था कि स्वतंत्रता और जीवित रहने के लिए पूँजीवाद महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार, बाजार के बिना, समाज में संसाधनों के आवंटन पर तर्कसंगत गणना करना असंभव होगा। इसके अतिरिक्त, समाजवादी प्रणाली में धन और आय का बंटवारा व्यक्ति के प्रोत्साहन को कम करता है जिसके परिणामस्वरूप आर्थिक विकास की गति धीमी हो जाती है, उद्यमशीलता के अवसर कम हो जाते हैं, और काम करने के लिए प्रेरणा या प्रतिस्पर्धा क्षीण हो जाती है क्योंकि समाजवादी व्यवस्था के तहत किसी को भी अतिरिक्त काम के लिए पुरस्कार या प्रोत्साहन नहीं मिलता है।

फ्रेडरिक हायक की पुस्तक 'द रोड टू सर्फडम (1944)', सामूहिक स्वामित्व और राज्य के हस्तक्षेप पर समाजवादी सिद्धांतों की सबसे गहन आलोचकों में से एक है। उनके अनुसार, राज्य शक्ति और आर्थिक शक्ति के विलय से सर्वसत्तावादी शासन की अगुआई हो सकती है, क्योंकि उत्पादन के साधनों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करने के लिए, राज्य को महत्वपूर्ण शक्तियों का अधिग्रहण करना होगा। आम जनता के राजनीतिक और आर्थिक अधिकारों का समर्पण किए बिना समाजवाद संभव नहीं हो सकता। इसलिए, उन्होंने कहा कि, 'समाजवाद का मार्ग सर्वसत्तावाद की ओर जाता है'।

दूसरी ओर, बीसवीं सदी के समाजवादी राज्यों की पिछली उपलब्धियाँ बहुत आकर्षक नहीं हैं। सोवियत संघ में स्टालिन का दमनकारी तानाशाही शासन, कंबोडिया में पोल पॉट के खमेर रूज का शासन, चीन में माओ की सांस्कृतिक क्रांति, या चिली में पिनोशे का शासन मानव इतिहास के कुछ सबसे काले प्रकरण थे। हायक के अनुसार इस प्रकार के क्रूर प्रकरण, समाजवादी प्रवृत्ति के अपरिहार्य परिणाम थे। यद्यपि कुछ समाजवादी राज्यों ने आर्थिक समृद्धि के संदर्भ में कुछ प्रगति की है, लेकिन तानाशाही, लोकतांत्रिक मूल्यों का दमन और राजनीतिक स्वतंत्रता पर प्रतिबंध बाहरी दुनिया से आलोचना का एक प्रमुख स्रोत रहा है।

7.8 समकालीन वाद–विवाद : समाजवादी राज्य का भविष्य

बीसवीं सदी के मध्य तक, समाजवाद विश्व के लगभग प्रत्येक भाग में प्रगति करने वाली एक महत्वाकांक्षी विचारधारा बना रहा है। कई देशों ने –कंबोडिया, चिली, पूर्वी जमर्नी, हंगरी, उत्तर कोरिया, वेनेजुएला तथा कई अन्य – किसी न किसी रूप में समाजवाद को अपनाया। हालाँकि, 1980 के दशक के उत्तरार्ध में समाजवाद एक बहुत कठिन दौर से गुज़रा, जब सर्वत्र कम्युनिस्ट राज्यों में आर्थिक सुधारों और राजनीतिक लोकतंत्रीकरण की मांग करते हुए कई लोकप्रिय आंदोलनों की लहर आ गई। समाजवादी शासन के लिए पहली बड़ी चुनौती 1989 में चीन में तियानमेन स्क्वैयर विरोध के साथ आई। दो महीने लंबे (अप्रैल से जून तक) सैन्य विरोध प्रदर्शनों ने कई सुधारों या लोकतंत्र समर्थक आंदोलनों की एक श्रृंखला को प्रेरित किया (जिसे अक्सर 'लोकतंत्र की लहर' कहा जाता है) जिसके परिणामस्वरूप दुनिया भर में कम्युनिस्ट शासन का पतन हुआ। पोलैंड में समाजवादी शासन सितंबर 1989 में ध्वस्त हो गया। अक्टूबर में, हंगरी ने बहुदलीय लोकतंत्र को अपनाकर चार दशकों से अधिक लंबे कम्युनिस्ट शासन

को समाप्त कर दिया। नवंबर में, बर्लिन की दीवार गिरने के साथ पूर्वी जर्मनी में समाजवादी शासन समाप्त हो गया। पूर्वी यूरोप के अन्य कम्युनिस्ट शासन बुल्गेरिया, चेकोस्लोवाकिया, रोमानिया आदि में नकाब की तरह ढह गए। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण घटना जिसने समाजवाद को हिला कर रख दिया, वह था 1991 में सोवियत संघ, पहले समाजवादी राज्य का विघटन।

1989–1991 की घटनाओं ने समाजवाद और समाजवादी राज्य व्यवस्था के भविष्य पर गहन बहस शुरू कर दी। फ्रांसिस फुकुयामा के अनुसार, इसने 'समाजवाद के अंत और उदार लोकतंत्र के आगाज़ का संकेत दिया'। फुकुयामा ने अपने प्रभावशाली निबंध 'द एंड ऑफ हिस्ट्री?' (1989) में, एक रेखीय प्रगति के रूप में इतिहास की मार्क्सवादी द्वंद्वात्मक पद्धति को अपनाया और कहा कि, सोवियत संघ के अंत ने 'मानव जाति के वैचारिक विकास के अंतिम बिंदु को चिन्हित किया' और इसलिए यह 'इतिहास का अंत' है। फुकुयामा की अभिव्यक्ति सरल थी; मार्क्स के लिए, मानव प्रगति का अंतिम चरण साम्यवाद होगा, और उन्होंने (फुकुयामा) उदार लोकतंत्र को 'मानव सरकार का अंतिम रूप' घोषित कर दिया। इस प्रकार सोवियत संघ के पतन के बाद, उदारवादी विद्वानों द्वारा समाजवादी राज्य के खिलाफ अन्य कम्युनिस्ट शासन के हाल ही में हुए पतन पर बहस छिड़ गई, यह तर्क दिया गया कि सभी समाजवादी राज्यों की अनिवार्य रूप से सोवियत संघ के समान ही नियति तय है। उदाहरण के तौर पर, डेविड शमबॉघ ने अपनी पुस्तक 'चाइनाज़ फ्यूचर (2016) में चीन में कम्युनिस्ट शासन में संभावित 'दरार' का पूर्वानुमान लगाया था। इसी प्रकार की भविष्यवाणियाँ क्यूबा, वियतनाम आदि में समाजवाद के भविष्य के बारे में की गई हैं।

शीत युद्ध के बाद की अवधि में साम्यवादी राज्यों के सामने आने वाली चुनौतियों ने उन्हें अलग–अलग श्रेणी के आर्थिक और राजनीतिक सुधार लाने के लिए मजबूर कर दिया। आवश्सकता मुख्य रूप से पूंजीवाद के साथ भूमंडलीकरण की ताकतों द्वारा प्रमुख आर्थिक प्रणाली के रूप में लाई गई थी। इन चुनौतियों से निपटने के लिए, कई कम्युनिस्ट देशों ने अपनी अर्थव्यवस्थाओं को बाहरी विश्व केलिए खोलकर, बाज़ार उन्मुख आर्थिक सुधारों की शुरूआत की। अधिकांश समाजवादी राज्यों ने समाजवादी अर्थव्यवस्था को बाजारवादी समाजवाद में स्थानांतरित कर दिया – समाजवाद का एक उप–प्रकार जो समाजवादी व्यवस्था के भीतर पूंजीवाद के कुछ लक्षणों को अपनाता है। उदाहरण के लिए, सन् 1978 में डेंग जियाओपिंग ने चीन में बाजार अर्थव्यवस्था के तत्वों को शामिल करने के लिए अपनी 'सुधार और प्रस्फुटन' नीति प्रस्तुत की। डेंग ने कृषि, उद्योग, राष्ट्रीय सुरक्षा और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में 'समाजवादी आधुनिकीकरण' के लिए 'चार आधुनिकीकरण' कार्यक्रमों की शुरूआत करी।

इसी प्रकार, क्यूबा ने 1990 में 'स्पेशल पीरियड इन टाइम ऑफ पीस' प्रारंभ किया जिसके तहत समुदायों की निर्णयों में अधिक से अधिक भागीदारी नियत करने के लिए स्थानीय परिषदों, स्थनीय सरकारी इकाइयों का गठन किया गया। क्यूबा ने भी आर्थिक चुनौतियों से निपटने के लिए 1990 के दशक की शुरूआत में अपनी अर्थव्यवस्था को बाजार मॉडल की ओर फिर से बढ़ाया। इसी तरह, वियतनाम ने 1986 में एक ,'समाजवाद की ओर प्रवृत बाजार अर्थव्यवस्था' की शुरूआत की, जिसे 'दोई मोई' आर्थिक सुधारों के रूप में जाना जाता है, जिसने अपनी केंद्र–नियोजित अर्थव्यवस्था को 'बहु–क्षेत्रीय' बाजार उन्मुख अर्थव्यवस्था

मॉडल में बदल दिया। इस प्रणाली के तहत, समाजवाद के निर्माण हेतु आर्थिक विकास को आकार देने में बाजार की अर्थव्यवस्था के अनुसार काम करने के लिए निजी व्यक्तियों और उद्यमों को अनुमति देने में राज्य(सरकारी) क्षेत्र निर्णायक भूमिका निभाता है।

लेकिन पूंजीवादी तत्वों के कई पहलू होने के बावजूद, वे अपनेआप को समाजवादी कहते हैं और कम्युनिस्ट पार्टियाँ अभी भी राज्य पर अपना दृढ़ नियंत्रण बनाए हुए हैं। हालाँकि, इस शब्द के वास्तविक अर्थ में, इनमें से कोई भी राज्य विशुद्ध रूप से समाजवादी नहीं है, एक विशुद्ध समाजवादी राज्य कभी अस्तित्व में नहीं था, और उनमें से किसी ने भी निजी संपत्ति या वर्ग प्रणालियों के उन्मूलन के लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया है जो कि एक कम्युनिस्ट विचारधारा की आवश्यकता है। फिर भी, समाजवादी देश अभी भी एक या दूसरे रूप में समाजवाद का अभ्यास करने का दावा करते हैं। लेकिन कई विद्वानों का मानना है कि समाजवाद से बाजार की अर्थव्यवस्था में धीरे–धीरे परिवर्तन अपरिहार्य है।

7.9 सारांश

वश्व की तीन मुख्य समाजवादी राज्यों की प्रकृति पर चर्चा करते हुए, हमें पता चला कि समाजवाद मनुष्य सामाजिक प्रवृति और उत्पादन के साधनों के सामूहिक स्वामित्व के सिद्धांतों पर आधारित एक विचारधारा है। रूस में अक्टूबर 1917 की क्रांति के बाद सोवियत संघ की स्थापना ने पहले समाजवादी राज्य की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। हालाँकि, सोवियत संघ और पूर्वी यूरोप के अन्य समाजवादी राज्य का अंततः शीत युद्ध के अंत तक पतन हो गया। इन घटनाक्रमों ने जीवित समाजवादी राज्यों को बड़ी चुनौतियाँ दी। इसलिए, सोवियत काल के बाद के चीन, क्यूबा और वियतनाम जैसे समाजवादी राज्यों के अस्तित्व के प्रश्न को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। बदलते अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था के साथ तालमेल बिठाने के लिए, इन समाजवादी राज्यों ने अपनी राजनीतिक व्यवस्था में कम्युनिस्ट पार्टी के एकाधिकार को बनाए रखते हुए आवश्यक आर्थिक सुधार और सीमित राजनीतिक सुधार किए हैं।

7.10 संदर्भ

फ्रेडमैन, मिलटन, .(1962). कैपिटलिज़्म एंड फ्रीडम, युनिवर्सिटि ऑफ शिकागो प्रेस।

गे, पीटर. (1952) दी डेलिमा ऑफ डेमोक्रेटिक सोशलिज़्मः एड्युर्ड बर्नस्टीनस् चैलेंज टु मार्क्स. कोलम्बिया युनिवर्सिटि प्रेस, न्यूयार्क।

हौब्स्बाव्न, ऐरिक. (2011). हाओ टु चेंज दी वर्ल्डः मार्क्स एंड मार्क्सिज़्म, 1840–2011, लिटिल ब्राउन, लंडन।

कार्ल मार्क्स एंड फ्रेडरिक एंजेल्स्. (1848). दी कम्युनिस्ट मेनिफेस्टो. इंटरनेश्नल पब्लिशर कं.लिमिटिड, न्यूयार्क।

मिलिबैंड, रैल्फ. (1969). दी स्टेट इन कैपिटलिस्ट सोसाइटी, वेडनफील्ड एंड निकोलसन, लंडन।

..... (1983). क्लास पावर एंड स्टेट पावर, वर्सो, लंडन।

मिसेस्, लुडविग वोन. (1951). सोशलिज़मः एन इकोनोमिक एंड सोशल एनालिसिस्. येल युनिवर्सिटि प्रेस, न्यूयार्क।

न्यूमेन, माइकल. (2005). सोशलिज़म : ए वेरी शोर्ट इनट्रोडक्शन. ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटि प्रेस, न्यूयार्क।

शम्पीटर, जोसफ. (1942). कैपिटलिज़्म, सोशलिज़्म एंड डेमोक्रेसी, हार्पर्स एंड ब्रदर्स।

शंभो, डेविड. (2016). चाइनाज़ फ्यूचर, पोलिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड

वी.आई. लेनिन (1917). स्टेट एंड रेवोल्यूशन. पेंग्विन क्लासिकस्, न्यू डेल्ही।

7.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) औद्योगिक पूंजीवाद द्वारा उत्पन्न 'अनुचित' और 'अन्यायपूर्ण' आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियाँ।

2) प्रारंभिक समाजवादी पूंजीवाद को सुधारने में विश्वास करते थे। जबकि कुछ लोगों ने उत्पादन और वितरण पर राज्य के नियंत्रण का प्रस्ताव रखा, और अन्य दूसरों ने पूंजीपति वर्ग को शिक्षित करके छोटे समूह स्थापित करने का आह्वान किया।

बोध प्रश्न 2

1) मार्क्सवादी मानते हैं कि सर्वहारा वर्ग की तानाशाही पूंजीवादी और कम्युनिस्ट समाज के बीच का क्रांतिकारी परिवर्तन का दौर है। पूंजीवाद की सभी विकृतियों को हटाने के लिए यह अवस्थांतरण चरण आवश्यक है।

2) मार्क्सवादियों के विचार में, एक क्रांतिकारी पार्टी को सत्ता पर कब्जा करने और उसके बाद पूंजीवाद के सभी विकृतियों को हटाने के लिए एक वैनगार्ड पार्टी(मोहरा पार्टी) की भूमिका निभानी होगी।

इकाई 8 उपनिवेशों की स्वतंत्रता और विकासशील विश्व में राज्य

संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 परिचय

8.2 उपनिवेशों की स्वतंत्रता और उपनिवेश विरोधी संघर्ष

8.3 उपनिवेशों की स्वतंत्रता की प्रक्रिया

8.3.1 लैटिन अमेरिका

8.3.2 द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उपनिवेशों की स्वतंत्रता

8.3.3 दक्षिण अफ्रीका

8.4 विकासशील देशों में राज्य

8.4.1 विकासशील देशों में राज्य की विशेषताएं

8.4.2 अति–विकसित राज्य

8.4.3 स्वायत्तता

8.4.4 महानगर का नियंत्रण

8.5 सारांश

8.6 संदर्भ

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता आधुनिक विश्व इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण प्रकरणों में से एक है, जिसने दुनिया के राजनीतिक मानचित्र को प्रमुखता से परिवर्तित कर दिया। परन्तु सदियों के दीर्घकालीन औपनिवेशिक शासन ने नए उभरते हुए राष्ट्रों को प्रभावित किया, जिसमें अन्य चीजों के अलावा उनकी राजनीतिक प्रक्रियाओं पर गहरी छाप डाली। इस इकाई में, हम उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता की प्रक्रिया एवं उपनिवेशवाद के पश्चात् अथवा विकासशील दुनिया में राज्य को समझने पर अलग–अलग दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित करते हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद, आपको निम्न बिंदुओं को करने में सक्षम होना चाहिए–

- उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता के मुख्य कारणों की पहचान करें।
- उपनिवेशवाद विरोधी संघर्षों की प्रकृति और प्रतिरूप (पैटर्न) की पहचान करें।
- विकासशील देशों में राज्यों को समझने के लिए सिद्धांतिक ढ़ांचों का वर्णन करें।
- उत्तर–औपनिवेशिक काल में देशों में राज्यों की विशेषताओं को पहचानें।

8.1 परिचय

उपनिवेशवाद विश्व के राजनीतिक क्षितिज पर तब दिखाई दिया जब यूरोपीय देशों ने मुख्य रूप से स्पेन और पुर्तगाल ने तथा बाद में ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, हालैंड आदि जैसे अन्य यूरोपीय देशों ने एशिया, लैटिन अमेरिका और अफ्रीका पर अपना साम्राज्य स्थापित करना शुरू किया। यूरोपीय शक्तियों ने तीसरी दुनिया के देशों के रूप में पहचाने जाने वाले देशों के संसाधनों का दोहन किया और औपनिवेशिक एवं साम्राज्यवादी नीतियों द्वारा लगभग चार शताब्दियों तक वहां के लोगों को अपने अधीन रखा। शोषण ने अनिवार्य रूप से अपने स्वयं के विरोधाभाषों को अनिवार्य रूप से राष्ट्रीय मुक्ति और लोकतांत्रिक आंदोलनों के रूप में उकसाया।

अंतर–युद्ध की अवधि (19919–1939) के दौरान उपनिवेशों ने उन देशों से उनकी उपनिवेश बनाने के अधिकार पर सवाल उठाए और जिन्होंने तीसरी दुनिया के लोगों पर अत्याचार किए। हालांकि, द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति और संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के बाद, उपनिवेशों की स्वतंत्रता का सिलसिला आरम्भ हुआ, उस समय कई एशियाई, अफ्रीकी और प्रशांत देश संप्रभु स्वतंत्र देशों के रूप में उभरे। इन देशों को तीसरी दुनिया या विकासशील दुनिया के रूप में और हाल के दिनों में राजनीतिक सिद्धांत एवं तुलनात्मक राजनीति में उत्तर–औपनिवेशिक समाज के रूप में वर्णित किया गया है। विकासशील दुनिया की सामान्य विशेषताओं की पहचान करते समय, उनके बीच भिन्नताओं की अनदेखी नहीं करनी चाहिए। कुछ जैसे अरब देश बहुत अमीर है, जबकि अन्य बांग्लादेश की तरह बहुत गरीब है। कुछ के पास सुदृढ़ लोकतांत्रिक संस्थान है और जबकि कई सत्तावादी या सैन्य शासन के अंतर्गत आते है। तीसरी दुनिया के देशों में आदिवासी समाजो से लेकर पूंजीवादी समाजों तक के सामाजिक निर्माणों के संदर्भ में भी मतभेद है।

इन सभी अंतरों के बावजूद, विकासशील दुनिया हमें उन देशों को एक साथ जोड़ने में मद्द करती है जो औपनिवेशिक वर्चस्व के खिलाफ लड़कर अस्तित्व में आए थे। वे सभी अपनी पृष्ठभूमि के कारण समान समस्याओं का सामना करते हैं। इसलिए तीसरी दुनिया या विकासशील दुनिया में समानताओं और असमानताओं को एक दूसरे को खत्म करने की अतिरंजना के बिना दोनों को ध्यान में रखते हुए अध्ययन करना उपयोगी है।

यह इकाई आपको नए स्वतंत्र देशों में उपनिवेश से स्वतंत्र होने की प्रक्रिया और राज्य की प्रकृति पर बहस से परिचित कराती है। हालांकि, विभिन्न सैद्धांतिक रूपरेखाएं है जिनमें राज्य को समझा जा सकता है। आप पहले के पाठ्यक्रमो में इनमें से कुछ सिद्धांतों से परिचित हो चुके है। यहां हम आपको उस संदर्भ से परिचित कराते है जिसमें विकासशील देशों में सरकारें कार्य करती है।

8.2 उपनिवेषवाद से स्वतंत्रता

उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता' के पद (टर्म या शब्द) से वर्तमान तात्पर्य का प्रादुर्भाव तब हुआ जब बीसवीं शताब्दी के मध्य में यूरोपीय औपनिवेशिक साम्राज्यों का अंत हुआ। इस टर्म का उपयोग कालानुक्रमिक काल में द्वितीय विश्व युद्ध के

बाद के वर्षो का उल्लेख करने के लिए किया जाता है, जब राजनीतिक उथल–पुथल ने एशिया, अफ्रीका और प्रशांत क्षेत्र में लगभग सौ नए राष्ट्र राज्यों की स्थापना में अग्रणी भूमिका निभाई।

यह 'उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता' का टर्म उपनिवेशवाद के सभी रूपों को समाप्त करने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है, न कि केवल प्रत्यक्ष राजनीतिक नियंत्रण को। 'उपनिवेशवाद से स्वतंत्रता' के इस आयाम ने तब प्रमुखता हासिल की जब घाना के क्वामे नेक्रमा ने आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षिक और अन्य अनौपचारिक साधनों के माध्यम से पूर्व उपनिवेशवादी सत्ता की निरंतरता को उजागर करने के लिए 'नव–उपनिवेशवाद' शब्द गढ़ा।

'तीसरी दुनिया' में वे देश शामिल थे, जिनमें से अधिकांश ने पूंजीवादी अर्थात प्रथम दुनिया या समाजवादी अर्थात द्वितीय दुनिया के प्रकार की श्रेणी के साथ गठबंधन करने से इंकार कर दिया। बाद में, इस शब्द ने एक आर्थिक आयाम हासिल कर लिया तथा इसे विकासशील देशों(तीसरी दुनिया) द्वारा उत्पादित की जाने वाली प्राथमिक वस्तुओं को और प्रथम दुनिया की विकसित निजी अर्थव्यवस्थाओ और दूसरी दुनिया की केंद्र–नियोजित अर्थव्यवस्थाओं से अलग करने के इस्तेमाल किया गया था।

1990 के दशक के बाद से, 'उत्तर–उपनिवेशवाद' शब्द का लोकप्रिय तरीके से इस्तेमाल दुनिया में पश्चिमी विचारों की सार्वभौमिकता के बहाने एक विशिष्ट राजनीतिक आवाज देने के लिए किया गया, जिसका विशेष रूप से उदारवाद और समाजवाद द्वारा प्रतिनिधित्व किया गया।

हाल के वर्षो में, वैश्विक दक्षिण शब्द का उपयोग देशों के उसी एक समूह को संदर्भित करने के लिए किया जा रहा है क्योंकि इस शब्द को 'तीसरी दुनिया' के लिए अधिक खुला और मूल्य मुक्त विकल्प के रूप में देखा जाता है तथा इसी तरह विकासशील देशों की तरह संभावित रूप से 'मूल्य निर्धारण' शब्द का उपयोग किया जाता है।

यूरोपीय साम्राज्यों का टूटना अथवा एशिया, अफ्रीका और प्रशांत क्षेत्र के देशों मे स्वतंत्रता की प्रक्रिया का आरम्भ होना, मुख्यतः बढ़ते राष्ट्रवाद और पश्चिमी उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवादी वर्चस्व के खिलाफ विद्रोह का परिणाम थी। कई उपनिवेशों में, औपनिवेशिक या विदेशी शासन के खिलाफ विरोध कब्जे के शुरूआत के समय से ही अस्तित्व में था। हालांकि, उपनिवेशवाद के खिलाफ आंदोलनों ने वास्तव में तब ताकत एकत्र की जब उपनिवेशों में राष्ट्रवाद का उदय हुआ। पश्चिमी मुल्यों और संस्थानों ने अनिवार्य रूप से इन उपनिवेशों में प्रवेश किया, एवं उनके सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था में मौलिक परिवर्तन की शुरूआत की, इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राष्ट्रवाद के उदय और विकास के मार्ग का प्रशस्त किया। हालांकि, पहले और दूसरे विश्व युद्ध के बीच के दशकों में, उपनिवेशवाद पर हमले ने राष्ट्रीय आंदोलनों के रूप में गति पकड़ी। पश्चिमी दुनिया के पूरे पूर्वी सीमांत पर, मध्य पूर्व और दक्षिण एशिया के माध्यम से मोरक्को से दक्षिण पूर्व एशिया तक वृहत प्रभाव क्षेत्र में लोगों ने स्वयं को साम्राज्यवादी वर्चस्व से छुटकारा दिलाया। यही कारण है कि राष्ट्रवादी आंदोलनों के वृहत उत्थान की प्रभावी शुरूआत के संकेत के रूप में प्रथम विश्व युद्ध के अतं को माना गया था, जो कि 1945 में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सफलता पर पहुंचा। मोरक्को में, अब्द अल–क्रिम ने स्पेनिश और फ्रांसीसीयों को

चुनौती दी, मिस्र में साद ज़गहलुल पाशा ने अंग्रेजों के खिलाफ राष्ट्रवादियों का नेतृत्व किया, और सीरिया में फ्रांसीसी बलात् शासन को गिराने के लिए विद्रोह हुआ। तुर्की, ईरान और अफगानिस्तान ने क्रांतिकारी नेताओं के उदय को देखा, जिन्होंने तानाशाही के आड़ में अपने देशों के आधुनिकीकरण के मसौदे को मनाने के लिए मजबूर करने का प्रयास किया। इनमें से अब तक का सबसे अद्भुत और सफल मुस्तफा कमाल था, कालदोष–युक्त आटोनियन साम्राज्य के फंदे को त्यागकर तुर्की को शांति और अपमान की संधि से बचाया, इसे एक राष्ट्र राज्य के रूप में समेकित किया एवं इसे अपने आधुनिकता के पथ पर प्रशस्त करने की शुरूआत की। यूरोप से सबसे पहले हटाए जाने के बाद, चीनी क्रांतिकारी आंदोलन धीरे–धीरे पेचीदा अभियानों और युद्ध के गठजोड़ से उभरा, एवं कुओमितांग चीनी राष्ट्रवाद का प्रमुख अवतार बन गया क्योंकि चियांग काई–शेक ने शक्ति के लिए गैर–न्यायिक कम्यूनिष्ट आदेश का तिरष्कार किया।

उपनिवेशवाद विरोधी संघर्षो के दो मुख्य प्रतिरूप (पैटर्न) थे। कुछ उपनिवेशों में, संघर्ष अपने औपनिवेशिक आकाओं के खिलाफ था, और मौजूदा सामाजिक–आर्थिक व्यवस्थाओं के खिलाफ नहीं। जहाँ संघर्ष केवल शासकों के खिलाफ थे और व्यवस्था के खिलाफ वहां मकसद था कि राजनीतिक शक्ति औपनिवेशिक आकाओं के हाथ से निकलकर औपनिवेशिक देशों के लोगों के पास हस्तांतरित हो जाएं। इन संघर्षो को 'स्वतंत्रता आंदोलनों' के रूप में वर्णित किया गया था, जो केवल संबंधित देशों के लोगों के हाथों में राजनीतिक शक्ति के हस्तांतरण की मांग करते थे। हालांकि, जहां न केवल विदेशी शासन के खिलाफ लड़ाई थी, बल्कि मौजूदा सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था के खिलाफ भी थी, जो व्यवस्था अन्यायपूर्ण, अलोकतांत्रिक और शोषण की समर्थक थी, इन संघर्षो को 'मुक्ति आंदालनों' या 'मुक्ति संघर्षो' के रूप में जाना जाता था।

मार्क्सवाद की अपील

अक्टूबर 1917 में रूस में क्रांतिकारियों और उनकी कम्युनिष्ट पार्टी के एक समूह द्वारा ज़ार के निरंकुश शासन को उखाड़ फेंकने से स्पष्ट संदेश गया कि यूरोपीय साम्राज्यवाद और उनके स्थानीय प्रतिनिधियों का संयुक्त उत्पीड़न बल अजेय नहीं है। मार्क्सवाद की अपील इतनी मजबूत हुई कि शायद ही कोई उपनिवेश था जिसमें बुद्धिजीवियों ने साम्यवाद या अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक आंदोलन में सहभागिता न की हो। रूस में नए नेतृत्व ने स्वतंत्रता प्राप्त करने और उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद को समाप्त करने के लिए सघंर्षो का समर्थन किया। इसने उपनिवेशों में राष्ट्रवादी आंदोलनों को प्रोत्साहित किया और वे उत्तरोत्तर उस समाजवादी धड़े की ओर बढ़ गए जिसमें उन्होंने एक सहानुभूति रखने वाले एवं एक तारणहार को देखा।

8.3 उपनिवेशों की स्वतंत्रता की प्रक्रिया

उपनिवेशों की स्वतंत्रता' शब्द समूह से यह धारणा बनी कि स्वतंत्रता प्राप्त करने की प्रक्रिया शांतिपूर्ण थी। उपनिवेशवाद स्वयं में एक हिसंक प्रक्रिया थी जिसमे औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा छल, युद्ध और साधारण घोषणाओं से राज्यों पर आधिपत्य स्थापित करना शामिल था। उपनिवेशों की स्वतंत्रता लोगों द्वारा विभिन्न रूपों में संघर्ष से जीती गई थी। कुछ देशों में यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण थी जैसे कि अफ्रीका के कुछ फ्रांसीसी उपनिवेशों में उदाहरणार्थ

सेनेगल, पश्चिमी अफ्रीका में आइवरी कोस्ट एवं कुछ ब्रिटिश उपनिवेशों जैसे नाइजीरिया, घाना आदि में।

कुछ देशों ने अंतर्राष्ट्रीय संगठनों जैसे राष्ट्र संघ और संयुक्त राष्ट्र के हस्तक्षेप के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्त की। राष्ट्र संघ के अधीन शासित क्षेत्र जैसे सीरिया, फिलिस्तीन, लेबनान, इराक, तंजानिया, रंवाडा, बुरूंडी, कैमरून, प्रशांत क्षेत्र आदि या तो स्वतंत्र हो गए या उन्हें संयुक्त राष्ट्र की ट्रस्टीशिप काउंसिल के अधीन रखा गया। इन संगठनों का उद्देश्य इन क्षेत्रों को स्व–निर्णय और अंततः स्वतंत्रता के लिए नेतृत्व करना था। उनमें से अधिकांश ने स्वतंत्रता प्राप्त की, दक्षिण पश्चिम अफ्रीका (अब नामीबिया) को छोड़कर जो दक्षिण अफ्रीका के ट्रस्टीशिप के अंतर्गत था और जिसने रंगभेद की नीति को आगे बढ़ाया। पुर्तगाल ने अफ्रीकी उपनिवेशों में–अंगोला, मोजाम्बिक, गिनी बिसाऊ में एक लंबा सशस्त्र संघर्ष देखा और वे 1974 तक स्वतंत्र नहीं हो सके, तत्पश्चात जब पुर्तगाल ने स्वयं लोकतांत्रिक क्रांति देखी, जिसने सैन्य तानाशाह साल्ज़र को उखाड़ फेंका।

अल्जीरिया के पूर्व फ्रांसीसी उपनिवेश को भी 1954 से 1961 तक यानि सात वर्षो तक सशस्त्र संघर्ष करना पड़ा, जबकि मोरक्को और ट्यूनीशिया ने तुलनात्मक सहजता के साथ स्वतंत्रता प्राप्त की। अल्जीरिया ने अपनी स्वतंत्रता की शुरूआत की तो फ्रांसीसी उपनिवेशवादियो ने विरोध किया जिसके परिणामस्वरूप नेशनल लिबरेशन फ्रंट ऑफ अल्जीरिया(एफएनएलए) के बेन बेला और फेरहत अब्बास के नेतृत्व में एक हिसंक संघर्ष हुआ।

8.3.1 लैटिन अमेरिका

लैटिन अमेरिका में, अफ्रीकी और एशियाई उपनिवेशों से बहुत पहले स्पेनिश एवं पुर्तगाली उपनिवेशों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त की गई थी। मैक्सिको और अन्य जगहों पर स्पेन के उपनिवेशों में क्रांतिकारी आंदोलनों की शुरूआत हुई तथा वेनेजुएला में स्वतंत्रता के लिए युद्ध का आगाज हुआ 19 वीं शताब्दी के शुरूआत तक अर्जेटीना आदि में भी। 1825 तक क्यूबा और प्यूर्टो रिको को छोड़कर स्पेन ने अपना विशाल साम्राज्य खो दिया।

अग्रेजों के खिलाफ उत्तरी अमेरिकी संघर्ष के कारण तेरह उपनिवेशों ने मिलकर संयुक्त राज्य अमेरिका का सृजन किया, इसके विपरीत स्पेनिश अमेरिकी विद्रोह और स्वतंत्रता के युद्धों ने सत्रह अलग–अलग गणराज्यों के लिए मार्ग प्रशस्त किया। क्यूबा और प्यूटी रिको में स्पेन का भ्रष्ट शासन तब तक जारी रहा जब तक कि संयुक्त राज्य अमेरिका स्पेन के खिलाफ क्यूबा आंदोलन में शामिल नहीं हो गया। क्यूबा ने न केवल स्पेन के खिलाफ स्वतंत्रता का क्रांतिकारी युद्ध लड़ा, बल्कि अमेरिकी वर्चस्व के खिलाफ भी संघर्ष किया। अमेरिका ने 1898 में स्पेन को क्यूबा से बाहर निकाल दिया, लेकिन इसके पश्चात अमेरिकी निवेशकों ने इस द्वीप पर अपना प्रभावी स्थान बना लिया, जिसके कारण क्यूबा ने अपने स्वयं के आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण खो दिया।

फिदेल कास्त्रों के नेतृत्व में, क्यूबा ने बतिस्ता के तानाशाही शासन के खिलाफ छापामार लड़ाई लड़ी और दिंसबर 1958 में उन्हें उखाड़ फेंका। बाद में कास्त्रों ने अमेरिकी संपत्ति को जब्त कर लिया, उन्होंने सोवियत संघ से समर्थन मांगा और मार्क्सवाद–लेनिनवाद से प्रेरित शासन की स्थापना की। संयुक्त राज्य

अमेरिका और क्यूबा के बीच वैचारिक संघर्ष शीत युद्ध के युग के बाद आज भी जारी है।

स्पेन और पुर्तगाल ने लैटिन अमेरिका में अपने साम्राज्य को फिर से स्थापित करने का प्रयास किया। हांलाकि, 1823 में, संयुक्त राज्य अमेरिका ने मोनरो सिद्धांत का प्रादुर्भाव किया, जिसके तहत मौजूदा उपनिवेशों की यूरोपीय शक्तियों की अधीनता को मान्यता देते हुए, भविष्य में किसी भी यूरोपीय शक्ति द्वारा उपनिवेश बनाने को अनुमति देने से इंकार कर दिया। यह वास्तव में, लैटिन अमेरिका में अपने स्वयं के हितों को बढ़ावा देने के लिए ब्रिटीश और अमेरिका की पैंतरेबाजी का एक हिस्सा था।

8.3.2 द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उपनिवेशों की स्वतंत्रता

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उपनिवेशो की स्वतंत्रता की प्रक्रिया तेज हो गई थी। फ्रेच भारत–चीन, डच इंडोनेशियाई ब्रिटीश मलाया और इतावली पूर्वी अफ्रीका जैसे कुछ औपनिवेशिक क्षेत्रों पर शत्रुओं ने कब्जा कर लिया था और वे वस्तुतः औपनिवेशिक नियंत्रण से कट गए थे। दक्षिण पूर्व एशिया पर जापानी कब्जे ने राष्ट्रवादी भावनाओं और पश्चिमी औपनिवेशिकवादियों को क्षेत्र से बाहर निकालने को प्रोत्साहन दिया, जिसके तहत उन्हें औपनिवेशिक प्रशासन में रणनीतिक पदों से हटाया और उनमें से अधिकांश पदों पर मूल निवासियों को बैठाया। अंत्तोगत्वा, अति अधिनायकवादी और दमनकारी जापानियो के पतन ने राष्ट्रवादियों को पराजित सेनाओं द्वारा छोड़े गए हथियारों को अपने कब्जे में लेने और उनके संघर्षो को आक्रामकता का अवसर दिया। इस तरीके से इंडोनेशिया और वियतनाम ने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा की। इंडोनेशियाई राष्ट्रवादियों को अपनी स्वतंत्रता हासिल करने के लिए डचों के खिलाफ चार साल तक लंबा संघर्ष करना पड़ा। दोनों मामलों में एक खुला युद्ध औपनिवेशिक सत्ता और राष्ट्रवादी ताकतो के बीच लड़ा गया था। वियतनाम में, वियतमिनों के नेतृत्व में, 1954 के संघर्ष विराम के बाद, फ्रांसीसी देश के उत्तरी भागों से वापस चले गए। दक्षिण में, एक गैर–कम्युनिष्ट सरकार स्थापित की गई थी। बाद में अमेरिकियों ने फ्रांसीसियों को परिवर्तित कर स्वयं को स्थापित कर दिया। अमेरिकी साम्राजयवाद के खिलाफ वियतनामियों द्वारा लंबे समय तक किया गया वीरतापूर्ण संघर्ष अपने आप में एक अभूतपूर्व घटना थी। द्वितीय विश्व युद्ध का सबसे दूरगामी ऐतिहासिक परिणाम निस्संदेह यह हुआ कि शीघ्रता से उन्नीसवीं शताब्दी के साम्राज्यों का विघटन और यूरोप का संकुचन हुआ। वास्तव में सबसे महत्वपूर्ण घटना 1947 में भारत की स्वतंत्रता थी। देश के विभिन्न हिस्सों में ब्रिटीश और स्थानीय जमींदारों के खिलाफ विभिन्न किसान और आदिवासी विद्रोह हुए एवं 1857 कें विद्रोह ने एक राष्ट्रवादी आंदोलन के उदय में योगदान दिया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना ने आंदोलन को एक संगठनात्मक अभिव्यक्ति दी। भारतीय राष्ट्रवाद गांधी जी से बहुत प्रभावित था, जिनके सिद्धांत के तत्व अहिंसा और असहयोग थे। गांधी जी के प्रवेश ने आंदोलन को एक जन आंदोलन में परिवर्तित कर दिया। भारत में सत्ता हस्तांतरण की अनुकूल परिस्थितियां समाजवादी उन्मुख लेबर पार्टी की सरकार के ब्रिटेन में सत्ता में आने के उपरांत हुई थी, हांलाकि भारत और पाकिस्तान में देश के अंतर्गत होने वाले विद्रोह को टाला नहीं जा सका। हांलाकि विभाजन शांतिपूर्ण नहीं था, लेकिन इसने संविधान की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।

अफ्रीकी उपनिवेशों में, गोल्ड कोस्ट (स्वतंत्रता के बाद घाना) और नाइजीरिया स्वतंत्रता के अग्रदूत बन गए। मार्च 1957 में, तोगोलैंड के ट्रस्ट क्षेत्र के साथ गोल्ड कोस्ट राष्ट्रमंडल के तहत प्रभुत्व के साथ घाना एक स्वतंत्र राज्य बन गया। नुक्रूमा, इसके प्रधानमंत्री थे, जो अफ्रीकी स्वतंत्रता के चैंपियन और पैन अफ्रीकीवाद के प्रतिपादक थे। नाइजीरिया के महासंघ ने 1960 में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त की।

8.3.3 दक्षिण अफ्रीका

उपनिवेशों की स्वतंत्रता के इतिहास में दक्षिण अफ्रीका और नामीबिया में अफ्रीकी लोगों का संघर्ष विशेष ध्यान देने योग्य है। ऐतिहासिक रूप से, डच पहली बार 1652 में दक्षिण अफ्रीका में में बसे थे जो वर्तमान का केपटाउन है। 19 वीं शताबदी के प्रथम भाग में अग्रेजों के आने और 1806 में केपटाउन में ब्रिटीश औपनिवेशिक शासन की स्थापना के साथ अग्रेजो के औपनिवेशिक क्षेत्र में विस्तार हुआ, डच औपनिवेशिक अफ्रीकी लोगों को केपटाउन छोड़कर ऑरेज़ नदी के उत्तर में जाने के लिए मजबूर किया गया– जिसका 1830 के दशक में बड़े पलायन, ग्रेट ट्रैक के रूप में समापन हुआ। इसके परिणामस्वरूप दो स्वंतत्र अफ्रीकी गणराज्यों–ऑरेंज फ्री स्टेट और ट्रांसवाल तथा नए ब्रिटीश उपनिवेश– नॅटाल का गठन हुआ। इनमें से प्रत्येक में केप उपनिवेश के रूप में नस्लीय स्तरीकृत समाज विकसित हुआ जिसमें गोरों का वर्चस्व रहा और अफ्रीकन की स्थिति दासत्व की रही। यद्यपि केप और नॅटाल में अंग्रेजों की घोषित नीति भेदभाव के विरूद्ध थी, परन्तु व्यवहार में संपत्ति की योग्यता ने मताधिकार को काफी हद तक गोरों तक सीमित कर दिया। डच अफ्रीकन गणराज्यों में, अफ्रीकियों को मताधिकार से वंचित कर दिया गया था, जिन्हे ऑरेज फ्री स्टेट में भूमि के स्वामित्व से बेदखल कर दिया गया था और वे गोरों के कब्जे वाले ट्रांसवाल के क्षेत्रों से गुजरने के लिए पास लेकर चलने के लिए बाध्य थे।

19 वी शताब्दी के अंत के पश्चात् किम्बरली में हीरे की और ट्रांसवाल में सोने के बड़े भंडारो की खोज ने, इन क्षेत्रों पर नियंत्रण हेतु डच और अग्रेजों में संघर्ष हुआ, जो अंततः डचो की हार और 1910 में यूनियन ऑफ साउथ अफ्रीका की ओर अग्रसर हुआ। इस यूनियन ने अफ्रीकन रिपब्लिक आफॅ ऑरेज स्टेट, ट्रांसवाल, केप उपनिवेश और नॅटाल को एक साथ लाया। दक्षिण अफ्रीका के संघ ने डोमिनियन का दर्जा प्राप्त किया और बाद में 1934 में ब्रिटीश साम्राज्य के अंतर्गत एक संप्रभु स्वतंत्र राज्य बन गया। 1961 में इसने ग्रेट ब्रिटेन के साथ अपने संबंध तोड़ लिए और एक गणतंत्र बनने के लिए राष्ट्रमंडल छोड़ दिया।

दक्षिण अफ्रीका की नस्लभेदी सरकार के रंगभेदी शासन ने अफ्रीकियों को यहां तक कि मूलभूत बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित कर दिया। ऐसे शासन को कई पश्चिमी सरकारों से समर्थन मिला, जिनकी दक्षिण अफ्रीका में रणनीतिक और आर्थिक रूचि थी। चूंकि अफ्रीकी लोगों के पास कोई कानूनी अधिकार नहीं था और न ही स्वतंत्रता थी, इसलिए शासन का विरोध निषेधित था। जैसे रंगभेद शासन तीव्रता से क्रूर हुआ, अफ्रीकी विपक्ष ने भी उग्रवाद अपनाया। अफ्रीकी प्रतिरोध जो गोरों के विरूद्ध सांस्कृतिक प्रतिरोध के रूप में शुरू हुआ, अतंतः 1923 में अफ्रीकी राष्ट्रीय कांग्रेस का रूप ले लिया तथा नेल्सन मंडेला इसके नेता के रूप में उभरे। उन्हें 1963 में रिवोनिया सुनवाई के बाद आजीवन

कारावास की सजा सुनाई गई। तीसरी दुनिया के देशों और गुट–निरपेक्ष आंदोलन ने अंतरराष्ट्रीय मंचो पर दक्षिण अफ्रीकी मकसद का समर्थन किया। 1980 और 1990 के दशक में संयुक्त राष्ट्र के भीतर और विकासशील दुनिया से बढते अंतराष्ट्रीय दबाव ने पश्चिमी देशों को अफ्रीकी देशों की कुछ मांगों को मानने के लिए मजबूर कर दिया। इसने रंगभेद शासन को अफ्रीकी विपक्ष के साथ बातचीत के लिए सहमत होने पर मजबूर कर दिया। 1993 में, नेल्सन मंडेला को जेल से रिहा कर दिया गया था। लम्बी वार्ता के बाद, 1994 में चुनाव हुए। इस प्रकार, संसदीय चुनाव के साथ सत्ता बहुमत के हाथो में यानि काले लोगो के पास स्थानांतरित हो गई।

दक्षिण पश्चिम अफ्रीका के पूर्व जर्मन उपनिवेश (नामीबिया) दक्षिण अफ्रीका के शासनादेश के तहत आए। जब संयुक्त राष्ट्र (यूएन) ने राष्ट्र संघ का स्थान प्राप्त कर लिया, तो दक्षिण अफ्रीका ने दक्षिण पश्चिम अफ्रीका पर ट्रस्टीशिप का दावा किया, इस प्रकार इस क्षेत्र में रंगभेद फैल गया। यूएन ने दक्षिण अफ्रीकी कब्जे को अवैध घोषित कर दिया और 1967 में संयुक्त राष्ट्र ने क्षेत्र के प्रशासन हेतु नामीबिया के लिए परिषद की स्थापना की। दक्षिण पश्चिमी अफ्रीकी पीपुल्स ऑर्गेनाइजेशन (एसडब्लूएपीओ) द्वारा चलाए गए दीर्घकालीन संघर्ष और संयुक्त राष्ट्र के प्रस्तावों के कार्यान्वयन के बाद, दक्षिण पश्चिम अफ्रीका ने स्वतंत्रता प्राप्त कर नामीबिया बना।

बोध प्रश्न 1

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

ब) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) स्वतंत्रता आंदोलनों और राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलनों के बीच भेद करें।

.....

.....

.....

.....

2) रंगभेद विरोधी आंदोलन की प्रकृति क्या थी ?

.....

.....

.....

.....

8.4 विकासशील दुनिया में राज्य

राजनीतिक सिद्धांत और तुलनात्मक राजनीति में कभी–कभी औपनिवेशिक समाज के रूप में संदर्भित तीसरी दुनिया में राज्य की प्रकृति के सवाल पर चर्चा हुई है। विकासशील दुनिया के राज्यों को समझने के लिए तीन महत्वपूर्ण सैद्धांतिक ढांचे है– उदारवादी, मार्क्सवादी और निर्भरता के आयाम।

उदारवादी सिद्धांत का तर्क है कि राज्य एक तटस्थ एंजेसी है और समाज में प्रतिस्पर्धी समूह के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करता है। दूसरे शब्दों में, किसी भी समूह को राज्य का विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। समाज में विभिन्न समूह राजनीतिक व्यवस्था के समक्ष अपनी मांगे रखते है। राज्य की एंजेसिया इन सभी मांगों पर विचार करती है और समाज के सामान्य हित में निर्णय लेती हैं। उदारवाद के अंतर्गत कुछ लेखकों का मानना है कि राज्य एजेंसियों पर कुलीन समूहों का प्रभुत्व है। कुलीन समूह कुछ व्यक्तिगत विशेषताओं के आधार पर वर्चस्व कायम करते है, जो आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण के कारण नहीं है। उदारवादी सिद्धांत यह मानता है कि लोकतंत्र में कुलीन वर्ग अपने व्यक्तिगत या समूह हितों के लिए शक्ति का उपयोग नहीं करते है। चुनावी मजबूरियां उन्हें सभी समूहों के कल्याण के लिए काम करने हेतु मजबूर करती हैं। तीसरी दुनिया में पश्चिमी अभिजात वर्ग राज्य को नियंत्रित करता है एवं इसे एक साधन के रूप में पारंपरिक कृषि समाज को एक आधुनिक औद्योगिक समाज में परिवर्तित करने के लिए उपयोग करता है।

उदारवादी दृष्टिकोण में दो कमियां है, पहला यह इस तथ्य को मानने से इंकार करता है कि व्यक्तियों की राजनीतिक क्षमता उनके आर्थिक संसाधनों से तय होती है। दूसरा यह समझाने में विफल रहता है कि कुलीन वर्ग अपने संकीर्ण आर्थिक एवं सामाजिक हितों से ऊपर उठकर सम्पूर्ण समाज के लिए कैसे काम करते है। दूसरे शब्दों में, समाज में वर्ग विभाजन को पूर्णतः नकार के राज्य की कोई भी व्याख्या करना केवल सरलीकरण करना होगा। राज्य समाज में अंतर्निहित है। इसलिए, समाज के संबंध में इसका अध्ययन किया जाना चाहिए।

मार्क्सवादी ढ़ाचे में राज्य न तो एक निष्पक्ष एजेंसी है और न ही एक सामान्य ट्रस्टी है। यह उनके हितो की रक्षा के लिए प्रभावी वर्गो के हितों को व्यक्त करता है। दूसरे शब्दों में, यह प्रभावी वर्गो के हाथों में एक उपकरण है। राज्य समाज का अनुसरण करता है, लेकिन यह पूर्ववर्ती नहीं है।

इसलिए राज्य की प्रकृति समाज में श्रम विभाजन के चरित्र पर निर्भर करती है। दुर्भाग्य से, मार्क्स ने राज्य पर विस्तार से नहीं लिखा है। उन्होंने सक्षिप्त टिप्पणी की। मार्क्स के अनुयायियों ने राज्य के बारे में विस्तार से लिखा है। हांलाकि, इनमें से अधिकांश लेखन विकसित पूंजीवादी देशों से संबंधित है। ये स्पष्टीकरण तीसरी दुनिया के देशों के लिए मान्य नहीं है, जो पूंजीवादी देशों से अलग है। तीसरी दुनिया के देशों का एक औपनिवेशिक अतीत है। राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करने बाद भी वे पश्चिमी विकसित देशों के द्वारा किए जा रहे आर्थिक शोषण के अधीन है। तीसरी दुनिया के देशों की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वहां एक वर्ग का नही बल्कि कई वर्गो का प्रभुत्व होता है।

उपर्युक्त परिस्थितियों के कारण तीसरी दुनिया के राज्यों की प्रकृति अलग तरीके की होती है। इसे विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे परिधीय राज्य, उत्तर औपनिवेशिक राज्य और अति विकसित राज्य। तीसरी दुनिया के देश औपनिवेशिक शोषण के अधीन थे, जिसने विकास के क्रम को भंग किया और एंकागी विकास को लाया। साम्राज्यवादी शक्तियों का वर्चस्व तीसरी दुनिया के देशों पर जारी रहा यहां तक उपनिवेशों की स्वतंत्रता के बाद भी। विकसित

पश्चिमी देशों और तीसरी दुनिया देशों के बीच संबंधों की प्रकृति के बारे में लेखकों में कोई एकमत नही है।

निर्भरता के सिद्धांत को प्रतिपादित करने वाले कुछ लेखकों का तर्क है कि तीसरी दुनिया के देश राजनीतिक स्वतंत्रता का उपभोग नहीं कर पाते है और उन पर साम्राज्यवादी शक्तियों का वर्चस्व जारी रहता है। इन लेखकों के अनुसार, दुनिया एक एकल पूंजीवादी प्रणाली में एकीकृत है। विकसित पश्चिमी देश विश्व व्यवस्था के मूल में है। औपनिवेशिक काल के दौरान, तीसरी दुनिया के देशों को साम्राज्यवादी देशों द्वारा अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला गया। इस प्रक्रिया के कारण, तीसरी दुनिया विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं के साथ संरचनात्मक रूप से एकीकृत है और विकसित देशों पर निर्भर है।

पूंजीवादी दुनिया में, तीसरी दुनिया सत्व के अनुबंध के रूप में जीवित रहती है जिसे मेट्रोपालिस भी कहते हैं – और जो पूंजीवादी दुनिया की परिधि में स्थित है। इस मॉडल में तीसरी दुनिया के राज्य महानगरीय राजधानी के हाथों में एक उपकरण होता है।

इस धारणा से सहमत होते हुए कि अविकसित देशों में पूंजीवादी देशों का वर्चस्व होता है, निर्भरता सिद्धांत के आलोचकों ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि तीसरी दुनिया राज्यों की काई स्वायत्तता नहीं होती। इन लेखकों के अनुसार, राजनीतिक स्वतंत्रता ने तीसरी दुनिया के देशों को नव–औपनिवेशिक अधिकारों द्वारा लगाए गए अवरोधों के भीतर अपने हितों को आगे बढ़ाने के लिए राज्य का उपयोग करने में सक्षम बनाया है।

8.4.1 विकासशील देशों में राज्य की विशेषताएं

एक संस्थान के रूप में राज्य एक ऐतिहासिक प्रक्रिया के हिस्से के रूप में अस्तित्व में आया। विकासशील दुनिया में, उपनिवेशिक स्वतंत्रता के कारण से राज्य को मिली विशिष्ट विशेषताओं ने राज्य को एक आकार दिया। कुछ मामलों में उपनिवेश के समय मौजूद सीमाओं को संशोधित किया गया था; कुछ अन्य मामलों में, पूरी तरह से नए राज्यों को तराशा गया। राज्य की क्षेत्रीय सीमाएँ हमेशा राष्ट्र के साथ मेल नहीं खाती; अर्थात्, अक्सर विभिन्न जातीय समूहों से संबंधित लोगों और उपनिवेशों की सीमाओं का पता लगा कर औपनिवेशिक शक्तियों की आवश्यकताओं के अनुसार उन्हें सीमांकित किया जाता था। अफ्रीकी राज्य इस राज्यों की कृत्रिमता को दर्शाने के लिए सबसे अच्छा उदाहरण है। उदाहरण के लिए नाइजीरिया पूरी तरह से एक ब्रिटिश रचना थी। विकासशील देशों की दुनिया में राज्य, राष्ट्र बनने से पहले राज्य बने। यह, काफी हद तक, क्षेत्रीय संघर्षों और राष्ट्रीय एकीकरण की समस्या के लिए ज़िम्मेदार है। औपनिवेशिक काल के बाद के कई विकासशील देशों ने जातीय और अलगाववादी आंदोलनों का सामना किया। ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों और राष्ट्रवादी आंदोलनों की गतिशीलता के कारण पाकिस्तान में अलगाववादी आंदोलन हुए, जो बांग्लादेश के सृजन का कारण बने। औपनिवेशिक सीमाओं की कृत्रिमता, औपनिवेशिक विरासत का प्रभाव और उपनिवेशिक स्वतंत्रता प्रक्रियाओं की गतिशीलता, विकासशील दुनिया में राज्य की जटिलता को स्पष्ट करती है।

विकासशील देशों में राज्य के पास निम्नलिखित विशिष्ट विशेषताएँ होती हैं।

1. यह एक अधिक विकसित राज्य होता है;
2. यह प्रमुख वर्गों से प्राप्त स्वायत्तता का आनंद उठाता है;
3. यह महानगरीय पूंजीपति वर्ग के हितों की रक्षा करते हैं।

8.4.2 अति विकसित राज्य

पश्चिमी पूँजीवादी देशों में, आधुनिक राष्ट्र–राज्य समाज की आंतरिक गतिशीलता के कारण उभरा है। यह पूंजीवाद के लिए ऐतिहासिक परिवर्तन के दौरान अस्तित्व में आया। उभरते पूँजीपति वर्ग ने राष्ट्र–राज्य स्थापित करने का बीड़ा उठाया। तीसरी दुनिया में राजनीतिक संस्थानों में बदलाव की प्रेरणा आहर से आई। औपनिवेशिक काल के दौरान तीसरी दुनिया पर पश्चिमी पूँजीवादी देशों का प्रभुत्व था। औपनिवेशिक शासकों ने अपनी छवि बनाए रखने के लिए राजनीतिक संस्थानों को बनाया था ताकि उपनिवेशों के मूल वर्गों पर हावी हो सकें और उनका आर्थिक शोषण कर सकें।

इन कार्यों को करने के लिए तथा उपनिवेशों को नियंत्रित करने के लिए औपनिवेशिक शासकों ने एक विस्तृत कानूनी–संस्थगत ढ़ांचा खड़ा किया। इन संस्थानों को संचालित करने वाली सेना और नौकरशाही ने औपनिवेशिक शासकों के मामलों के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

स्वतंत्रता के बाद भी विस्तृत संरचना अस्तित्व में रही। इस राज्य की दो मुख्य विशेषताएँ हैं : एक, कि यह स्थानीय वर्गों द्वारा गठित नहीं है और न ही इसे सामाजिक परिवर्तन के कारण स्थापित किया गया है; और दूसरा, कि मूल शासक वर्गों का राज्य पर कोई नियंत्रण नहीं था।

राज्य उस समय और स्थान से बहुत आगे है जिसमें यह स्थित है। इसलिए विकासशील देशों में नौकरशाही और सेना ने एक केंद्रीय स्थान हासिल कर लिया। पश्चिमी पूँजीवादी देशों में नौकरशाही की पूरक भूमिका निभाती है। यह प्रमुख वर्ग का एक साधन है, जबकि विकासशील देशों में इसका एक केंद्रीय स्थान है और इसे प्रमुख वर्गों से स्वायत्तता प्राप्त है।

एक अति विकसित राज्य लोकतांत्रिक संस्थानों को कमज़ोर करता है। यहाँ तक कि उन विकासशील देशों में भी जहाँ लोकतांत्रिक संस्थाएँ मौजूद हैं और निर्वाचित प्रतिनिधि राज्य एजेंसियों को नियंत्रित करते हैं, नौकरशाही राज्य पर अपना प्रभुत्व बनाए रखती है। हालांकि, यह नेताओं के साथ लीग में नियंत्रण रखता है।

लोकतांत्रिक नियंत्रण वाले देशों में राजनेता केंद्रीय स्थान पर अधिकार रखते हैं। राजनेता समर्थन जुटाने के लिए लोगों की मांगों को व्यक्त करते हैं। वे लोगों की मांगों को पूरा करने के लिए नीतियाँ बनाते हैं। इस प्रक्रिया में राजनेता राजनीतिक संस्थानों को वैधता प्रदान करते हैं। हालांकि, नौकरशाही की प्रक्रियाओं और नियंत्रणों द्वारा हुकुमत को किनारे कर दिया जाता है। राजनेताओं को राज्य और लोगों के बीच दलालों के रूप में बदल दिया जाता है।

8.4.3 स्वायत्तता

पश्चिमी देशों में सुघड़ प्रमुख वर्ग का प्रभुत्व है। सभी पश्चिमी देशों में पूँजीपति वर्ग प्रमुख वर्ग है। विकासशील दुनिया कई प्रमुख वर्गों के अस्तित्व से अंकित है। ज़मींदार वर्ग, यानी, तीसरी दुनिया को नियंत्रित करते महानगर के स्थानीय पूँजीपति।

इन सभी वर्गों से मिलकर बने गठबंधन राज्य पर हावी होते हैं। इस गठबंधन को ऐतिहासिक गुट कहा जाता है। ऐतिहासिक गुट इसीलिए उभरते हैं क्योंकि विकासशील देशों के समाज के गठन में पूँजीवादी और पूर्व–पूँजीवादी दोनों के सामाजिक संबंधों के तत्व शामिल होते हैं। पूँजीवादी वर्ग समाज में पूर्व–पूँजीवादी संबंधों के खिलाफ लड़ने में कमज़ोर और अक्षम साबित होते हैं।

पूँजीवादी वर्ग कमज़ोर होता है क्योंकि वह आर्थिक गतिविधियों पर सीमित नियंत्रण रखता है। आर्थिक उत्पादन का बड़ा भाग या तो महानगरीय पूँजीपति वर्ग द्वारा या स्थानीय भूस्वामियों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। कोई भी वर्ग इतना मज़बूत नहीं होता है कि राज्य पर नियंत्रण कर सके।

चूंकि एक भी वर्ग प्रभावी नहीं है, इसलिए राज्य ऐतिहासिक गुटों के विभिन्न वर्गों के बीच रिश्तों को विनियमित करने के लिए स्वायत्तता अधिगृहित कर लेता है। विकासशील देशों में राज्य, प्रमुख स्थानीय वर्गों और महानगरों के पूँजीपति वर्ग के हित में पूँजीवादी उत्पादन प्रक्रिया को पुनः स्थापित करने के लिए व्यापक आर्थिक संसाधनों को उपलब्ध करा कर अपनी स्वायत्तता का समर्थन करता है।

8.4.4 महानगर का नियंत्रण

विकासशील देशों में राज्य को विदेशी शक्तियों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। अर्थव्यवस्था की अल्पविकसित प्रकृति और सत्तारूढ़ अभिजात्य वर्ग की प्रकृति राज्य को विदेशी सहायता और पूँजी पर निर्भर कर देती है। सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग राज्य और विदेशी पूँजीपतियों के बीच मध्यस्थों का व्यवहार कर लाभ एकत्र करते हैं। यह प्रक्रिया विकास में मदद नहीं करती है। शासित और शासकों के बीच तथा अमीर और गरीबों के बीच की खाई चौड़ी हो जाती है। यह तर्क अतिशयोक्ति पूर्ण होगा कि विकासशील दुनिया में राज्य पूर्ण रूप से साम्राज्यवादी शासकों के नियंत्रण में आ जाता है। औपनिवेशिक प्रभुत्व से स्वतंत्रता मिलने से साम्राज्यवादी शक्तियों के पूँजीपति वर्ग का तीसरी दुनिया पर सीधे नियंत्रण बनाए रखने की गुंजाइश को खत्म कर दिया है। हालांकि, यह विकासशील दुनिया के राज्यों को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। राष्ट्रीय सीमाओं को भंग करके अति–विकसित तीसरी दुनिया के राज्य, वैश्विक बाज़ार के विकासशील दुनिया में प्रवेश करने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनाते हैं। प्रौद्योगिकी और निवेश की सुविधाओं को शामिल करके राज्य, तीसरी दुनिया और वैश्विक बाज़ार का एकीकरण करता है। राज्य, सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग, बाहरी दुनिया के साथ कम शक्ति और करने की क्षमता के साथ मोल भाव करते हैं।

बोध प्रश्न 2

नोटः अ) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।
ब) इकाई के अंत में दिए गए उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) मार्क्सवादी विश्लेषण में, विकासशील देशों में राज्य अपनी स्वायत्तता कैसे बनाए रखता है?

.....

.....

.....

.....

.....

8.5 सारांश

उपनिवेशवाद का उदय दुनिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय है क्योंकि इसने दुनिया के विभिन्न हिस्सों के बीच संबंधों को बदल दिया। औपनिवेशवाद से स्वतंत्रता और उपनिवेश का साम्राज्यवाद–विरोधी संघर्ष ने जिसे जन्म दिया उसे तीसरी दुनिया कहा जाता है। ये राष्ट्रवादी, साम्राज्यवाद–विरोधी आंदोलन अपनी विशिष्टताओं के साथ प्रत्येक देश में भिन्न थे। यह औपनिवेशिक नीतियों के स्वरूप और औपनिवेशिक समाजों पर उनके प्रभाव के कारण था। यहाँ ऐसे उपनिवेश भी थे जो कि संवैधानिक प्रक्रियाओं और सुधारों के माध्यम से स्वतंत्र हुए; और कुछ ऐसे थे जिन्हें सशस्त्र मुक्ति संघर्षों के माध्यम से स्वतंत्रता हासिल हुई। कुछ ने अंतरराष्ट्रीय दबावों और राष्ट्र संघ और संयुक्त राष्ट्र जैसे संगठनों के हस्तक्षेप के कारण स्वतंत्रता प्राप्त की। हालांकि, इन मतभेदों पर अधिक ज़ोर नहीं दिया जाना चाहिए। व्यवहारिक रूप से, सभी उपनिवेशों ने औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा हिंसक उत्पीड़न का अनुभव किया। यहाँ तक कि उन देशों के लिए भी जिन्हें संवैधानिक सुधारों के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्त हुई, यह कहना गलत होगा कि उन्के संघर्ष हमेशा शांतिपूर्ण थे। औपनिवेशिक शक्तियों की घुसपैठ के कारण कुछ उपनिवेशों में सशस्त्र संघर्ष अपरिहार्य हो गया।

तीसरी दुनिया के राज्य काफी हद औपनिवेशिक निर्माण इस अर्थ में हैं कि उनकी सीमाएँ, उनके शासन करने का तरीका औपनिवेशिक नीतियों से बहुत प्रभावित हैं। तीसरी दुनिया में प्रमुख वर्गों की प्रकृति पर कई भिन्न विचार हैं। कुछ लोगों का तर्क है कि तीसरी दुनिया में मूल पूंजीवादी वर्ग का प्रभुत्व है। लेकिन एक प्रमुख दृष्टिकोण यह है कि तीसरी दुनिया में कोई प्रमुख वर्ग सुनिर्मित नहीं है। विभिन्न वर्गों का अस्पष्ट गठबंधन तीसरी दुनिया पर प्रभावी है।

तीसरी दुनिया राज्य का प्रमुख वर्गों के साथ अपने संबंधों के संदर्भ में भी विश्लेषण किया जाता है। तीसरी दुनिया पर अधिकांश लेखकों का तर्क है कि राज्य को उन शासक वर्गों से स्वायत्तता प्राप्त है जो सामाजिक संरचना द्वारा सीमांकित है।

कुछ ऐतिहासिक व्यक्तित्वों के कारण, तीसरी दुनिया राज्य ने एक और विशिष्ट चरित्र प्राप्त कर लिया। औपनिवेशिक शासकों ने उपनिवेश पर अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए अत्यधिक केंद्रीकृत राज्य प्रशासन तंत्र बनाया। इस प्रकार राज्य प्रशासनिक तंत्र ऊपरी व्यवस्था द्वारा थोपा गया और यह कभी आंतिरक सामाजिक गतिशीलता से बाहर नहीं निकल पाई। इसलिए तीसरी दुनिया राज्य समाज के अनुरूप नहीं है, इसकी समाज के साथ बड़े फलक पर यदि तुलना की जाए तो या तो यह उन्नत है या अति–विकसित है।

तीसरी दुनिया को विभिन्न कोणों से देखने के बाद हम यह कह सकते हैं कि तीसरी दुनिया राज्य एक अति–विकसित, उत्तर–औपनिवेशिक राज्य है, जिसको

शासक वर्ग से स्वायत्तता प्राप्त है। दूसरे शब्दों में, यह तीसरी दुनिया के जटिल सामाजिक गठन का उत्पाद है।

8.6 संदर्भ

ए.वंदना, (1995). थ्योरी ऑफ इंटरनैशनल पॉलिटिक्स. विकास पब्लिशिंग कं., नई दिल्ली।

सीज़र, एमी. (1972). डिस्कोर्स ऑन कोलोनिअलिज़म, मंथली रिव्यू प्रेस, न्यूयार्क।

दुरा, प्रसन्नजीत एडस्. (2004). डीकोलोनाइज़ेशनः परस्पेक्टिवज़ फ्राम नाओ एंड़ देन. रौतलऐज, न्यूयार्क।

मैनोर, जेम्स. (1991). रीथिंकिंग थर्ड वर्ल्ड पॉलिटिक्स्. लौंगमैन, लंदन।

मेलकोट, एस.रामा. (1992). इंटरनैशनल रिलेशनस्; स्टर्लिंग पब्लिशर प्रा. लि., नई दिल्ली।

नकरूमाह, क्वामें. (1965). नीओ–कोलोनिअलिज़मः दी लास्ट स्टेज ऑफ इंपीरिअलिज़म, इंटरनैशनल पब्लिशरस्, न्यूयार्क।

पूल एंड टार्डऑफ. (1981). थर्ड वर्ल्ड पॉलिटिक्स्ः ए कम्पैरेटिव इंट्रोडक्शन, गैमोच–मैक्मिलन, लंदन।

रोदरमुंड, डेटमार, (2006). दी रोतलऐज कम्पैनियन टु डीकोलोनाइज़ेशन. रोतलऐज, न्यूयार्क।

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) दोनों उपनिवेशवाद–विरोधी संघर्ष हैं, किन्तु 'स्वतंत्रता आंदोलनों' ने संबंधित देशों के लोगों के लिए केवल राजनीतिक शक्ति के हस्तांतरण की मांग की है। दूसरी ओर मुक्ति आंदोलनों ने न केवल विदेश शासन के खिलाफ, बल्कि मौजूदा सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था के खिलाफ भी लड़ाई लड़ी, जो अन्याय, अलोकतांत्रिक और शोषण का समर्थक थे।

2) यह मूल रूप से एक अहिंसक आंदोलन था जो पूरे विश्व में प्रगतिशील तबके द्वारा समर्थित था।

बोध प्रश्न 2

1) विकासशील देशों में राज्य अपनी स्वायत्तता बनाए रखने के लिए, स्थानीय प्रमुख वर्गों और महानगर के पूंजीपति वर्ग के हित में पूंजीवादी उत्पादन प्रक्रिया को फिर से शुरू करने हेतु बृहत आर्थिक संसाधनों को तैनात कर देता है।